१२२

प्रकाशक—
जीतमल लूणिया संचालक
हिन्दी साहित्य मन्दिर, अजमेर

नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद की अनुमति से

छठी बार मई १९६१
मूल्य
एक रुपया

मुद्रक—
प्रतापसिंह लूणिया एम ए
जॉब प्रिंटिंग प्रेस, अजमेर।

विषय-सूची

रामनाम की महिमा

१ राम ईश्वर का एक नाम

"रामनाम ईश्वर का एक नाम है।"

"यदि वह नहीं है तो हम भी नहीं हो सकते हैं। इसलिए हम सब उसे एक आवाज से परमात्मा ईश्वर, शिव विष्णु राम अल्लाह, खुदा दादा होरमज्द जिहोवा गॉड इत्यादि अनेक और अनन्त नामों से पुकारते हैं।"

"मेरी बुद्धि और हृदय ने बहुत पहिले यह अनुभव कर लिया था कि भगवान् का सर्वोत्तम नाम सत्य ही है। मैं 'राम' नाम से सत्य पहचानता हूँ।"

"मेरा राम, हमारी प्रार्थना के समय का राम वह ऐतिहासिक राम नहीं है जो दशरथ का पुत्र और अयोध्या का राजा था। वह तो सनातन अजन्मा और अद्वितीय राम है।"

"सब रोगों की रामबाण दवा के रूप में मैं जिस राम का नाम सुझाता हूँ वह तो स्वयं ईश्वर ही है।

राम कौन

"ईश्वर है भी और नहीं भी है। मूल अर्थ से ईश्वर नहीं है। मोक्ष के प्रति पहुँची हुई आत्मा ही ईश्वर है इसलिये उसको संपूर्ण ज्ञान है। भक्ति का सच्चा अर्थ आत्मा का शोध ही है। आत्मा को जब अपनी पहचान हो जाती है तब भक्ति नहीं रहती फिर वहाँ ज्ञान प्रकट होता है।

ज्ञान की खोज में

एक फ्रेंच लेखक ने एक कहानी लिखी है। उसका नाम 'ज्ञान की खोज में' रख सकते हैं। लेखक कितने ही विद्वानों को जुदे-जुदे भू-भाग में ज्ञान की खोज में भजता है। उसका एक दल हिन्दुस्तान में भी आता है। एक शोधक ब्रह्मज्ञानियों शास्त्रियों दरबारियों इत्यादि के यहाँ जाता है परन्तु ज्ञान उन्हें कहीं नहीं मिलता। ज्ञान का अर्थ ये शोधक निश्चित करते हैं ईश्वर की खोज। अन्त को एक अन्त्यज का घर हाथ आता है। वहाँ वे भक्ति की पराकाष्ठा देखते हैं। सरलता निर्दोषता अकृत्रिमता का प्रथम अनुभव उन्हें वहीं होता है। वहीं उन्हें ईश्वर का साक्षात्कार होता है और वे इस निश्चय पर पहुँचते हैं कि जो शख्स अनायास ईश्वर की भेंट करना चाहता हो तो उसे ग़रीब और तिरस्कृत लोगों में उसकी खोज करनी चाहिए।

यह वार्ता तो कल्पित है। परन्तु हमारे शास्त्र इस बात का साक्ष्य देते हैं। सुदामा को भगवान सहज में मिल गये। मीराबाई जब रानी न रह गई तब भगवान् से मिल पाई। दुर्योधन कृष्ण के मस्तक की ओर जाकर बैठा तो अकेली सेना उसे मिली। भगवान् सारथी तो हुए पैर के पास बैठने वाले अर्जुन के।

ये विचार नीचे लिखे पत्र को पढ़कर मन में उत्पन्न हो रहे हैं—

'मेरी उम्र २५ साल की है। माँ बाप नहीं हैं। सग सम्बन्धी बहुत थोड़े हैं। इस समय तो एक ही तीव्र इच्छा है और वह बढ़ती जा रही है। मैं कौन हूँ? सृष्टि के साथ मेरा सम्बन्ध क्यों हुआ? ईश्वर नामक कोई वस्तु है या नहीं?

'समुद्र में बड़ी बड़ी हिलोरें आती हैं परन्तु आम पोछ छोटी

अन्दर छोटे बड़े कितने ही दुर्गुणों ने घर कर लिया है। परन्तु इन सब का मुक़ाबला मुझे पूरे बल के साथ करना पड़ता है। कुछ चले गये हैं, कुछ मृतप्राय हो गये हैं। कभी कभी दर्शन दे देते हैं। मुझे उनके साथ घोर युद्ध करना पड़ता है। रामनाम जपा करता तो मेरा पता न लगता। अजामिल नारायण नाम से पार हो गया, यह गप मालूम होती है। सत्संग और सतत प्रयत्न पूर्वक रात दिन माया के साथ युद्ध करते करते ऊंचा चारित्र्य निर्माण हो सकता है।"

मैं जन्मतः ब्राह्मण हूँ। छूआछूत में विश्वास नहीं बैठता। संध्या पूजा पाठ एक क़वायद है। बीमार की सेवा में जो आनन्द मिलता है वह उसमें नहीं। योगाभ्यास में बहुत श्रद्धा है। ध्येय सिद्धि के लिये पाख़ाना साफ़ करने में भी न सकुचाऊंगा। कातना धुनकना बुनना नहीं जानता। खादी पहनता हूँ।

'तीन महीने छुट्टी पड़ती है तब आश्रम में आकर रहना चाहता हूँ। अपने जीवन का कोई मार्ग नहीं निश्चित कर पाता। कोई ऐसा मार्गदर्शक मिले तो अच्छा हो जो मेरी श्रद्धा बैठा दे। साधु संतों पर एकदम श्रद्धा नहीं बैठती। जिसका जीवन ऐसे मोहजाल से निकल नहीं पाता है वह भला देहात में समाज की क्या सेवा करके संतोष पहुँचा सकता है।

इस पत्र के लेखक निर्मल हृदय के हैं। वे ज्ञान की खोज में हैं। पर ज्यों ज्यों ज्ञान को खोजते हैं, त्यों त्यों वे उस से दूर भागते हुए दिखाई देते हैं। जो चीज़ बुद्धि के द्वारा नहीं प्राप्त हो सकती उसके लिए वे बुद्धि का प्रयोग कर रहे हैं। जिस चीज़ के लिए वे अकुला रहे हैं उसके फल के लिए व्यर्थ ही प्रयत्न कर रहे हैं। कर्म के फल की आशा न रखने का अर्थ यह नहीं कि फल मिलेगा नहीं। आशा न रखने का अर्थ यही है कि कोई कर्म निष्फल नहीं

जाता और संसार की विचित्र रचना में ऐसी गूंथन है कि कोई पहचान नहीं पड़ती कि तना कौनसा है और शाखा कौनसी है। ऐसे फिर जो अनेक कर्मों के समुदाय का फल है उसमें यह कौन जान सकता है कि एक व्यक्ति के कर्म का फल कौनसा है? यह जानने का हमें अधिकार भी क्या है? एक राजा के सिपाही को अपने किये कर्म का फल जानने का अधिकार नहीं होता तो हमें जो कि इस संसार के सिपाही हैं अपने कर्म के फल को क्या करना है? क्या यही ज्ञान काफ़ी नहीं है कि कर्म का फल अवश्य मिलता है?

पर इस लेखक को न तो रामनाम में श्रद्धा है न ईश्वर में श्रद्धा है। मैं उनसे सिफ़ारिश करता हूं कि वे करोड़ों के अनुभव पर श्रद्धा रखें। संसार ईश्वर की हस्ती पर क़ायम है। रामनाम ईश्वर का एक नाम है। रामनाम से घृणा हो तो वे शौक़ से ईश्वर के नाम से या अपने रखे किसी नाम से पूजें। अजामिल के उदाहरण को गप मानने का कोई कारण नहीं है। सवाल यह नहीं है कि अजामिल हुआ था या नहीं पर यह है कि ईश्वर का नाम लेता हुआ वह पार हो गया या नहीं। पौराणिकों ने मनुष्य जाति के अनुभवों का वर्णन किया है। उनकी अवहेलना करना इतिहास की अवहेलना करना है। माया के साथ युद्ध तो सदा ही हुआ है। अजामिल जैसों ने युद्ध करते हुए नारायण नाम का जप किया है। मीराबाई सोते बैठते खाते पीते गिरिधर का नाम जपती थी। युद्ध के एवज यह नाम नहीं है बल्कि युद्ध करते हुए उस नाम को लेकर युद्ध को पवित्र बनाने की विधि है। रामनाम और द्वादश मंत्र जपनेवाले माया के साथ युद्ध करते हुए थकते नहीं हैं। बल्कि माया को धक्का देते हैं। इसी से कवि ने गाया है —

"माया सबको मोहित करती हरिजन से वह हारी रे।"

राम रावण का दृष्टान्त तो शाश्वत है। इससे सन्तोष न होने का अर्थ इतना ही है कि असन्तुष्ट होने वाले ने राम रावण को एतिहासिक पात्र मान लिये हैं। एतिहासिक राम रावण तो चले गये। परन्तु मायावी रावण आज भी मौजूद है और जिनके हृदय मे राम का निवास है वे रामभक्त आज भी रावण का संहार कर रहे हैं।

जो बात मृत्यु के बाद ही जानी जाती है उसको आज जान लेने का लोभ रखना कितना जबरदस्त मोह है? पांच साल का बच्चा पचासवें साल में क्या हो जायगा? यह जानने का लोभ रखे तो क्या हालत होगी? जिस तरह ज्ञानी बालक औरों के अनुभव से अपने सम्बन्ध मे कुछ अनुमान कर सकता है उसी तरह हम भी औरों के अनुभव से मृत्यु के बाद की स्थिति का कुछ अनुमान करके सन्तुष्ट रह सकते हैं।

अथवा मृत्यु के बाद क्या होगा यह जानने से क्या लाभ? सुकृत का फल मीठा और दुष्कृत का फल कडुवा होता है, यही विश्वास क्या बस नहीं है? अच्छे से अच्छे कृत्य का फल मोक्ष है यह व्याख्या मोक्ष की मैं पूर्वोक्त लेखक को सूचित करता हूँ।

लेखक मूर्ति का स्थूल अर्थ करके भुलावे में डालने वाली उपमा लेकर खुद ही भुलावे में पड़ गये हैं। मूर्ति परमेश्वर नहीं है बल्कि मूर्ति में परमेश्वर का आरोपण करके लोग उसमें तल्लीन होते हैं। लकड़ी के मनुष्य बनाकर मनुष्य का काम लकड़ी के पुतलों से हम नहीं ले सकते। परन्तु चित्र के द्वारा अपने मां बाप की स्मृति ताजा रखने के लिए चित्रों का प्रयोग करके लाखों सुपुत्र और सुपुत्री क्या

पूरा करते हैं? परमेश्वर सर्वव्यापक है। अर्चा के एक पत्थर उसका आरोपण करके परमेश्वर की भक्ति हो सकती है।

अन्त में लेखक यदि यह मानते हों कि देहात में रह के द्वारा देहातियों की सेवा करने में उन्हें संतोष होगा तुरन्त देहात में चले जाने की तैयारी करनी चाहिए।

(नवजीवन हिन्दी अंक ११ ता० १६ मार्च १९२५

ईश्वर का रूप

आपने कई बार लिखा है कि ईश्वर के मायने वीतरागी स्वतंत्र और उपाधिरहित शुद्धात्मा है, क्योंकि ईश्वर सृष्टि नहीं पैदा की और वह पापपुण्य का हिसाब भी नहीं बैठता। तो भी आप ईश्वरेच्छा की बात बार बार करते ही हैं। उपाधिरहित ईश्वर को इच्छा कैसे हो सकती है और इच्छा के आधीन आप कैसे हो सकते हैं? आपकी आत्मा जो करना चाहती है कर सकती है। यदि एकदम न कर सकती हो तो उसी आत्मा का पूर्वसंचित कर्म ही उसका कारण है न कि ईश्वर। आप सत्याग्रही होने के कारण सिर्फ मुग्धात्माओं को समझाने के लिये यह असत्य बात नहीं कहते होंगे तो फिर यह ईश्वरेच्छा वेवहार क्यों?

ईश्वर के जिस रूप को मैं मानता हूं उसी का मैं वर्णन करता हूं। भूलेभूले लोगों को समझाकर मैं क्या-पाप किसलिए होने दूं। मुझे उनसे कौनसा इनाम लेना है? मैं तो ईश्वर को कर्ता अकर्ता मानता हूं। उसका भी मेरे स्याद्वाद से उद्भव होता है। जैनों के स्थान पर बैठकर उसका अकर्तृत्व सिद्ध करता हूं और रामानुज के स्थान पर बैठकर उसका कर्तृत्व सिद्ध करता हूं। हम सब अचिन्त्य का चिन्तन करते हैं। अवर्णनीय का वर्णन करते हैं और अज्ञेय

को जानना चाहते हैं। इसलिए हमारी भाषा तुतलाती है अपूर्ण है और कभी कभी तो वक्र भी होती है। इसलिए तो ब्रह्म के लिए वेदों ने अलौकिक शब्दों की रचना की और उसका 'नति' के विशेषण से परिचय दिया। लेकिन यद्यपि यह नहीं है फिर भी वह है। अस्ति सत् सत्य • १ ११ यह कह सकते हैं। हम लोग हैं हमें पैदा करने वाले माता पिता हैं और उनके भी पैदा करने वाले ह इसलिए सबको पैदा करने वाला भी एक है यह मानने में कोई पाप नहीं है लेकिन पुण्य है। यह मानना धर्म है। यदि वह नहीं है तो हम भी नहीं हो सकते हैं। इसलिए हम सब उसे एक आवाज से परमात्मा ईश्वर, शिव विष्णु राम अल्लाह खुदा वावा होरमज जिहोवा गॉड इत्यादि अनक और अनत नामों से पुकारते हैं। वह एक समुद्र के एक बिन्दु में भी समा जा सकता है और एसा भारी है कि सात समुद्र मिलकर भी उसे सहन नहीं कर सकते हैं। उसे जानने के लिये बुद्धिवाद का उपयोग हो क्या हो सकता है ? वह तो बुद्धि से अतीत है। ईश्वर के अस्तित्व को मानने के लिए श्रद्धा की आवश्यकता है। मेरी बुद्धि अनेक तर्क वितर्क कर सकती है। बड़े भारी नास्तिक के साथ विवाद करने में मै हार जा सकता हूँ फिर भी मेरी श्रद्धा बुद्धि से भी इतनी अधिक आगे दौड़ती है कि मैं समस्त संसार का विरोध होने पर भी यही कहूँगा कि ईश्वर है वह है ही।

लेकिन जिसे ईश्वर को इन्कार करना है उसे उसका इन्कार करने का भी अधिकार है। क्योंकि वह तो बड़ा दयालु है रहीम है रहमान है। वह मिट्टी का बना हुआ कोई राजा तो है नहीं कि उसे अपनी दुहाई कबूल कराने के लिए सिपाही रखने पड़ें। वह तो हम लोगों को स्वतन्त्रता देता है। फिर भी केवल अपनी दया

के बल से हम लोगों को नमन करने के लिए मजबूर करता है, लेकिन हम लोगों में से यदि कोई नमन न भी करे तो भी वह कहता है,—चाहो से न करो मेरा सूर्य तो तुम्हारे लिए भी रोशनी देगा मेरा मेह तो तुम्हारे लिए भी पानी बरसायेगा। मेरा प्रणाम के लिए मुझे तुम पर बलात्कार करने की कोई नहीं है। जो नादान है वह भले ही उसे न माने लेकिन मैं बुद्धिमानों में से एक हूँ इसलिए उसको प्रणाम करने से कभी चूकता।

(हिन्दी नवजीवन अंक ११ का २१ जनवरी १९२६ पृष्ठ

मोक्षदाता राम

हमें जिन राम के गुण गाने हैं वे राम वाल्मीकि के राम नहीं हैं, तुलसी रामायण के राम भी नहीं हैं जो कि तुलसीदासजी की रामायण मुझे अत्यन्त प्रिय है और उसे मैं अद्वितीय ग्रंथ मानता हूँ तथा एक बार पढ़ना शुरू करने पर कभी थकता नहीं तो भी हम आज तुलसीदासजी के राम का स्मरण करने वाले नहीं हैं और न गिरधरदास के राम का। तब फिर कालीदास और भवभूति के राम का तो कहना ही क्या? भवभूति के उत्तररामचरित में सौंदर्य है किन्तु उसमें वे राम नहीं हैं जिनका नाम भवसागर तर सकें या जिनका नाम हम दुःख के अवसर पर लिया करें। असह्य वेदना से दुःखित आदमी को मैं कहता हूँ कि रामनाम लो अगर नींद न आती हो तो भी कहता हूँ कि लो रामनाम। किन्तु ये राम तो दशरथ के कुंवर या सीता के पति राम नहीं हैं। ये तो देहधारी राम ही नहीं हैं। जो हमारे हृदय में बसते हैं वे राम देहधारी हो ही नहीं सकते। अंगूठे के समान छोटा सा तो हमारा हृदय और उसमें भी समाये हुए राम देहधारी क्यों कर हो

सकते हैं, या तो किसी खास चैत्र की नवमी को उनका जन्म हुआ ही नहीं होगा। वे तो अजन्मा हैं वे तो पृथ्वी को पैदा करने वाले हैं संसार के स्वामी हैं। इसलिए हम जिन राम का स्मरण करना चाहते हैं और जिनका स्मरण करना चाहिए वे राम हमारी कल्पना के राम हैं दूसरे की कल्पना के राम नहीं।

इतना याद रखें तो हमारे मन में जो अनेक प्रश्न उठा करते हैं वे न उठें। कितनी बार सवाल होता है कि बालि का वध करने वाले राम संपूर्ण पुरुष क्योंकर होंगे? मेरे पास भी ऐसे ऐसे अनेक प्रश्न आते हैं इसलिए मैं मन ही मन हँसता हूँ। किसी ने अगर छल से या सीधी रीति से किसी को मारा अथवा कोई दस सिर का देहधारी रावण हो तो उसी को मारकर कौनसा भारी काम कर लिया? आज का जमाना तो ऐसा है कि बीस क्या असंख्य भुजा का भी कोई रावण पैदा हो तो एक बालक तोप के एक ही गोले से उसके असंख्य हाथ और माथा उड़ा देवे। उसे हम अलौकिक बालक नहीं गिनेंगे। उसे हम बड़ा राक्षस मानेंगे। मैं मानता हूँ कि हम राक्षस के बड़े भाई के समान शक्ति पैदा करना नहीं चाहते उसकी पूजा करने से हमें शान्ति नहीं मिलेगी। हम पूजा करें तो अंतर्यामी की जो सबके भीतर है और साथ ही सबसे जुदा है और सबका स्वामी है। उन्हीं के बारे में हमने गाया कि निबल के बल राम' इसमें तो 'द्रुपद सुता निबल भई' की भी बात आई है। अब द्रौपदी और देहधारी राम का मेल कहाँ बैठता? तो भी कवि ने गाया है कि द्रौपदी की लाज राम ने रखी। इसमें तो वही राम है जो सभी को सामान्य हैं, तो भी जिन्हें कोई पहचान नहीं सकता। हम उसी राम का स्मरण करते हैं। हम अंतर्यामी राम और कृष्ण में भेद नहीं है।

रामनवमी का पर्व इसीलिए मनाया गया कि उसके दिन हम कुछ संयम का पालन करें, लड़के कुछ निर्दोष आनंद लें, रामायण पढ़कर कुछ बोध लेवें। देहधारी मनुष्य ईश्वर को दूसरे तरीके से झट नहीं पहचान सकता। उसकी बुद्धि दूर नहीं दौड़ सकती और इसलिए वह मानता है कि ईश्वर ने मनुष्य के रूप में अवतार लिया था। हिन्दू धर्म में अवतारों का पार नहीं है। इसलिए वर्णन किया है कि परमेश्वर ने मत्स्य में वराह के रूप में और नरसिंह के रूप में अवतार लिया था। मनुष्य ने देहाभ्यास से ईश्वर की कल्पना देहधारी के रूप में की और तब उसके अवतार लेने की कल्पना की है। कहा है कि जब धर्म की ग्लानि हो और अधर्म फल पड़े तो ईश्वर धर्म की रक्षा के लिए अवतार लेता है। यह बात भी उसी तरह और उतनी हद तक सच्ची है जितनी मैंने कही है। नहीं तो ईश्वर को अवतार लेना ही क्या? यह मानने का कोई कारण नहीं है कि ऐतिहासिक पुरुष ईश्वर के रूप में था ईश्वर ५ ईश्वर के रूप में अवतरा था। जो जो महापुरुष हो गए हैं, उनके गुण देखकर मनुष्यों ने उन्हें पूर्ण अथवा अंशावतार माना और यह जानते हुए भी कि वाल्मीकि या तुलसीदास के राम के उपासकों ने अपना ईश्वर उन्हीं को माना है उनके वैसे मानने में कोई दोष नहीं है। किन्तु मैंने जो बात तुम्हें पहले सुनाई उसे सदा याद रखो तो तुम्हारे भ्रमजाल में पड़ने का कारण न रहे। हमारे सामने अगर कोई बहाएं रखकर हमें भ्रम में डालना चाहे तो उसे कहो कि हम किसी देहधारी राम की पूजा नहीं करते। हम तो अपने निरंजन निराकार राम को पूजते हैं। उसके पास सीधे नहीं पहुँच सकते इसलिए जिनमें ईश्वर

मान कल्पना की है उन मर्मों को गाते हैं।

जब तक हम देह की दीवार के पार नहीं देख सकते तब तक सत्य और अहिंसा के गुण हम में पूरे पूरे प्रकट होने वाले नहीं हैं। जब सत्य के पालन का विचार करें तब देहाध्यास छोड़ना ही चाहिए क्योंकि सत्य के पालन के लिये मरना जरूरी होगा। अहिंसा को भी यही बात है। देह तो अभिमान का मूल है। देह के बारे में जिसका राग बधा हुआ है वह अभिमान से मुक्त हो ही नहीं सकता। जब तक मेरे मन में यह है कि यह देह मेरी है, तब तक मैं सर्वथा हिंसामुक्त होता हो नहीं हूँ। जिसकी अभिलाषा ईश्वर का दर्शन की है उसे देह के पार जाना पड़ेगा। अपनी देह का तिरस्कार करना पड़ेगा मौत की भेंट करनी पड़ेगी।

ये दो गुण जब हम ग्रहण करलेंगे तभी हम तर सकेंगे, ब्रह्मचर्यादि का पालन कर सकेंगे। मगर इनका पालन करना चाहें तो सत्य के बिना कैसे चलेगा? सत्य का मुख तो सुवर्णमय पात्र से ढका हुआ है 'हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्' सत्य बोलने सत्य के आचरण करने में डर क्यों हो? असत्यरूपी चमकीला ढक्कन जब तक दूर न करें तब तक सत्य की झांकी क्यों कर होवे? कोई कसूर करे तो उस पर क्रोध करने के बदले प्रेम करना क्या हमको रुचता है, हम इस संसार को असार कह कर गाते हैं सही मगर क्या उसे असार समझते भी है?

राम तो कहते हैं कि मुझ से मिलना हो तो इस संसार से भाग जा। मगर शरीर को भगाने से भागा नहीं जाता। अनासक्ता की वृत्ति पैदा करके चौबीस घण्टे काम करते हुए भी हम राम से मिल सकते हैं। यही बात गीताजी में सिखलाई गई है। गीता को मैं इसीलिये आध्यात्मिक शब्दकोष मानता हूँ। तुलसीदासजी

ने यही बात हमें सुन्दर काव्य के रूप में सिखलाई है।

किन्तु यानी तो यही है जो मैंने बतलाई है आप अपनी कल्पना के ही राम तारेंगे। मेरा राम मुझे आपको नहीं और आपका राम आपको तारेगा मुझे नहीं। सब तुलसीदासजी के समान सुन्दर काव्य नहीं बना जीवन में ईश्वर को उतार कर, जीवन को सकते हैं।

(हिन्दी नवजीवन अंक ११ ता० २ अक्तूबर १९२८ पृष्ठ [illegible])

क्या राम ने खून बहाया था ?

जिस भाई को खादी जहर की तरह लगती है उन्हीं भाई का दूसरा यह प्रश्न है —

'मुझे तो ऐसा लगता है कि हम निर्बल और इसीलिए अहिंसात्मक असहयोग हमारे लिए श्रेष्ठ है। रामचन्द्रजी का राज्य रामराज्य था फिर भी उन्होंने रावण से लड़ाई लड़कर खून बहाया। क्या आप भूतकाल का ऐसा भी उदाहरण उपस्थित कर सकेंगे कि खून बहाये बिना किसी ने विजय प्राप्त की हो ? यदि कोई कुत्ता किसी बच्चे को उठा लेजाने के लिए आयगा तो अपनी जान की लगाकर भी बिल्ली उसे ऐसा न करने देगी। यद्यपि जानती है कि उसकी कुछ चलेगी नहीं फिर भी वह मरने तैय्यार हो जाती है और कुत्ता उसे मारने के बाद ही बच्चे लेजा सकता है। इसमें प्रकृति का कोई हाथ होगा ? मुझे कि अहिंसात्मक असहयोग के कारण ही सरकार अपने पंजे का जोर ज्यादा से ज्यादा आजमाती जा रही है किन्तु हम कोई चमत्कार करके दिखलायें तो उसे हमारे सामने

ही पड़ेगा। वह १००० आदमियों का खून करेगी तो हम भो ३०० ४०० को तो मार ही डालेंगे। ३३ करोड़ भारतीय अहिंसा पर विश्वास करने लगें यह आकाशकुसुम की भाँति है। इसलिए देश की नब्ज ठीक तरह देख। मुझे ऐसा लगता है कि रोग का निदान करने में आप से भूल हो गई है।

मेरा दृढ़ मत है कि अहिंसात्मक असहयोग निर्बल का ही बल नहीं है वरन् विशेष रूप से बलवान का बल है। यह सर्वव्यापक सिद्धान्त है। जानकारी या बेजानकारी में हम निरन्तर इस पर अमल करते भी हैं। आजकल के इतिहास में राजाओं की लड़ाई की चर्चा है। प्रजा का जनता का इतिहास बाद में लिखा जाने को है। जब यह इतिहास लिखा जायगा,तब हम उसके पन्ने-पन्ने पर अहिंसात्मक असहयोग पावेंगे। स्त्री जब दुष्ट पति के बस में नहीं आती तब वह जो करती है वह अहिंसात्मक असहयोग है। क्वेकर* लोगों का इतिहास अहिंसात्मक असहयोग से सुशोभित है। हिन्दुस्तान में वैष्णवों का इतिहास इसी वस्तु का प्रतिपादन करता है। जो कुछ न सोच कर सके हैं उसे संसार कर सकता है।

देखने वाले इस बात को स्पष्ट रूप से देख सकते हैं कि जगत की गति शान्ति की ओर है। मनुष्य-जाति का मनुष्य शरीर है किन्तु पशुस्वभाव का उसने अभी तक त्याग नहीं किया है, किन्तु त्याग करने में ही भलाई है। अतः बिल्लियों और कुत्तों का उदाहरण अप्रस्तुत और अशोभनीय है। हम कुत्ते-बिल्ली नहीं वरन् दो पैरों पर सीधे खड़े होनेवाले आत्मा को पहिचानने की इच्छा रखनेवाले ज्ञानशक्ति वाले प्राणी हैं।

---

* क्वेकर एक ईसाई सम्प्रदाय है और इस सम्प्रदाय के लोग अपनी शान्तिप्रियता के लिए प्रसिद्ध हैं।

और रामचन्द्र ? यह किसने सिद्ध किया है कि रामचन्द्र ने लंका में खून की नदी बहाई? दस सिरों वाला रावण कब पैदा हुआ था ? बानरों की सेना किसने देखी थी ? रामायण धर्मग्रन्थ है रूपक है। जिस राम को करोड़ों व्यक्ति पूजा करते हैं वे हृदय में बसने वाले हृदय के स्वामी हैं। दस सिरों वाला विकराल विकार-रूप रावण भी हमारे शरीर में मौजूद है। उससे अन्तर्यामी राम का युद्ध निरन्तर चालू है। वह तो दया की मूर्ति है। किसी ऐतिहासिक राम ने किसी ऐतिहासिक रावण से युद्ध किया हो तो उससे हमें खास नसीहत नहीं मिलती। ऐसे प्राचीन राम-रावण की चर्चा करने की क्या आवश्यकता है? आज जगह-जगह वे भरे पड़े हैं। सनातन राम ब्रह्मस्वरूप है, सत्य और अहिंसा की मूर्ति है।

हिन्दुस्तान की समस्या क्रोध से हल होने वाली नहीं है रामायणादि के पन्नों का अनर्थ करने से हल होनेवाली नहीं है, पशु का अनुकरण करने से हल होनेवाली नहीं है। इस समस्या के समाधान के लिए हमें अपने को पहचानना पड़ेगा। अहिंसात्मक असहयोग हिन्दुस्तान को अपने मनुष्यत्व का स्मरण करानेवाली वस्तु है फिर भले ही इस वस्तु को करोड़ों आदमी एक ही समय न अपनायें। करोड़ों आदमी कभी शस्त्र को भी नहीं अपना सकते। अहिंसात्मक युद्ध में यदि थोड़े लोग भी मारे जायेंगे तो वे करोड़ों का काम करेंगे और उनमें चेतना उत्पन्न करेंगे। यह मेरा स्वप्न हो तो भी यह मेरे लिए मधुर है। यह आकाशकुसुम हो तो भी मेरी कल्पना की दृष्टि में यह शोभा देता है और इसमें से बराबर सुगंध निकलती रहती है।

(व्यापक धर्म भावना के ११-७-२१)

राम का अर्थ क्या ?

आज (२०-९-३२) बेलगांव से प्रभुदास का लम्बा पत्र आया और बापू ने भी ६०० शब्दों का लम्बा पत्र लिखा। मगन भाई, चरखे पर १४ दिन की मेहनत के बाद खुद को मिलने वाले क़ाबू पर सन्तोष प्रकट करते हैं। चरखे की करामात की तारीफ़ करते हैं। इस चरखे को आजमाने का अपना संकल्प बड़े और कमजोर हाथ के कारण सफल हुआ, इसके लिए अपने को धन्य समझते हैं और प्रभुदास को लिखते हैं—"तेरे चरखे में मैं जो रस ले रहा हूँ वह तू अपनी आँखों से देखले तो मुझे इतना आनन्द हो कि तेरा एक दो सेर खून तुरन्त बढ़ जाय। हाथ को कुछ नहीं हुआ था तभी तेरे चरखे का प्रयोग करने का संकल्प कर चुका था। अब तो जबरदस्ती का पुण्य कहना पड़ रहा है या तो कातना छूटे या इसी चरखे पर कते। इतना लिखवा कर कहने लगे—"महादेव" 'Necessity is the mother of invention' का गुजराती क्या है।" मैंने कहा—'आवश्यकता आविष्कारनी जननी छे'। ऐसा मैंने दो तीन जगह लिखा हुआ देखा है। फिर सोचने लगे। वल्लभभाई से पूछा। वल्लभभाई एक के बाद एक कहावतें कहने लगे। गरज पड़े तो गधे को काका बनाना पड़ता है इत्यादि। मैंने कहा—'गरज गधे का घोड़ा बना देती है' यह बात शायद हो सकती है। फिर बापू बोले—बस मुझे सूझ गया है अब लिखो— 'इसलिए जैसे आफ़त में फंसने पर मनुष्य को नई अकल सूझ करती है वैसे ही इस वक्त आफ़त में फंसने के कारण मैं चरखे पर पाई हुई गति को बढ़ाने की युक्तियां खोजा करूंगा। इस बीच तू छूट जाय और उस वक्त मैं मुलाकातें करता होऊं तो मुझसे मिल जाना और कुछ नयी बात हो तो सिखा जाना। प्रभुदास ने पूछा था कि गीता में

'मामेकं शरणं व्रज' आता है 'मत्पर:' आता है उसमें 'मत्पर:' का क्या अर्थ है ? और आप ईश्वर का अर्थ सत्य बताते हैं तो मनुष्य सत्य का प्रतीक क्या बनावे? रामनाम जपे मगर राम कौन? इस तरह की उलझनें पूछी थीं । उसे लिखा—'मत्पर: यानो सत्यपरायण' 'चरणपद्म मम चित्त निर्ष्पदित करो हैं' इसमें चरणपद्म का अर्थ है सत्यनारायण का चरणकमल—यह शब्द इस्तेमाल करके भक्त ने सत्य को मूर्तिमान बना दिया है। सत्य तो अमूर्त है। इसलिए सब लोग अपने को ठीक लगे वैसी सत्य की मूर्ति की कल्पना करलें। यह समझ लेने के बाद असंख्य मनुष्य असंख्य मूर्तियों की कल्पना कर सकते हैं। जब तक ये सब कल्पनायें ही रहगी, तब तक अच्छी ही हैं क्योंकि इस मूर्ति से मनुष्य को अपने लिए जो कुछ चाहिये वो मिल जाता है। असल में विष्णु महेश्वर, ब्रह्मा भगवान ईश्वर ये सब नाम बिना अर्थ के या अधूरे अर्थवाले हैं। सत्य ही पूरे अर्थवाला नाम है। कोई यह कहे कि मैं भगवान के लिये मरूंगा तो इसका अर्थ वह स्वयं नहीं समझ सकता और सुनने वाला भी शायद ही समझेगा। मैं सत्य के लिए मरूंगा यह कहने वाला स्वयं समझता है और बहुत कुछ सुनने वाला भी समझ सकेगा। तू यह पूछता है कि राम का अर्थ क्या ? इसका अर्थ मैं समझाऊं और तू जाप करे, तो यह लगभग निरर्थक है। मगर तू जिसे भजना चाहता है वह राम है यह समझ कर राम नाम जपेगा तो हो वह तेरे लिए कामधेनु हो सकता है। ऐसे संकल्प के साथ तू जप फिर भले ही तोते की तरह ही रटता हो। तेरे जप के पीछे संकल्प है तोते की रट के पीछे संकल्प नहीं है। यह बड़ा फर्क है। यहां तक कि संकल्प के कारण तू तरजा सकता है। तोता संकल्परहित होने के कारण थक कर अपनी रटन छोड़ देगा या

मालिक के लिए करता होगा तो अपना रोज का खाना पीना लेकर चुप हो जायगा। इस दृष्टि से तुम्हें किसी प्रतीक की जरूरत नहीं और इसीलिए तुलसीदासजी ने राम से राम के नाम की महिमा ज्यादा बतलाई है। यानी यह बताया कि राम का अर्थ के साथ कोई सम्बन्ध नहीं। अर्थ तो भक्त अपनी भक्ति के अनुसार बाद में पैदा कर लेगा। यही तो इस तरह के जाप की खूबी है। नहीं तो यह कहना साबित नहीं हो सकता कि जड़ से जड़ मनुष्य में भी चेतनता आ सकती है। शर्त एक ही है कि नाम का जप किसी को दिखाने के लिए न हो, किसी को धोखा देने के लिए न हो। मैंने बताया उस ढंग से संकल्प और श्रद्धा के साथ जपना चाहिए। इसमें मुझे कोई शंका नहीं कि इस तरह जपते हुए जो आदमी थकता नहीं उस आदमी के लिये वह कल्पतरु हो जाता है। जिन्हें धीरज होगा वे सब अपने लिये इसे सिद्ध कर सकते हैं। प्रथम तो किसी का दिनों और किसी का बर्षों तक इस जप के समय मन भटका करेगा बेचैन रहेगा और नींद आवेगी और इससे भी ज्यादा दुखद परिणाम आवेगा। तो भी जो आदमी जपता ही रहेगा उसे यह जप जरूर फल देगा। यह निःसंदेह बात है। चरखे जैसी स्थूल वस्तु भी हमें लंब किये बिना हाथ नहीं आती तब इससे भी मुश्किल दूसरी चीजें इससे भी ज्यादा कष्ट देकर सिद्ध होती हैं। तब फिर उत्तम वस्तु को पाना चाहता है वह सम्पूर्ण मर्ज तक अपने को दी हुई दवा का धीरज के साथ सेवन न करें और निराश होकर बैठा रहे उसके लिये क्या कहा जाय ? मेरा खयाल है इतने में तेरे सवालों का जवाब आ जाता है। क्योंकि इस तरह लिखने के बाद तेरे लिए पूछने को कुछ रह नहीं जाता। श्रद्धा जम जाय तो चलते फिरते खाते

पीते सोते उठते यही रटन लगा और हारने का नाम न ले। ? हो सारा जन्म इसी में बीत जाय। यह करता रह और ! बारे में जरा भी शक न रख तो तुझे दिन प्रति दिन अधि शान्ति मिलेगी।]

(महादेव भाई की डायरी—पहला भाग २ २ ३२ पृष्ठ १९१ १९२ १'

भाई हनुमानप्रसाद

... ...तुम्हारे पत्र मुझको हमेशा प्रिय लगते हैं। य पत्र अधिक प्रिय लगे हैं क्योंकि उनमें से तुम्हारी सत्यपरायण और अनुभव भी मिलता है। बुद्धि के प्रयोग करके मैं अब बात नहीं समझा सकूंगा। इतना मानो कि जो कुछ मैं कर रहा हूं ऐसा लगता है वह मैं नहीं करता हूं। मुझसे कोई करा है। वह मेरी बुद्धि से निरंजन निराकार राम है लेकिन दश रावण भी हो सकता है। इसका पता तो मृत्यु के बाद ही तक संभव है मिल सकता है और थोड़ा परिणाम से मिल स है। पूर्णतया तो मिल ही नहीं सकता क्योंकि मनुष्य-हृदय की अंतर्यामी के सिवा कोई जानता ही नहीं। —बापू के पत्रों

राम और सत्य

मूर्तिपूजा न माननेवाले एक शिक्षक ने निम्नलिखित प्रश्न पूछ

१ जो मनुष्य रामनाम के जीवन का अनुकरण करता है, क्या राममन्दिर में जाने की आवश्यकता रहती है? क्या अनुकरण की अ सर्वोत्तम अच्छा है?

२ यदि हम किसी व्यक्ति को नमस्कार करें तो बदले में वह नमस्कार करेगा। प्रतिमा तो हिलती तक नहीं। जो उत्तर देने में अ है उसे नमस्कार करने से क्या लाभ?

यह पत्र गरवरा जेल से हनुमानप्रसादजी पोद्दार को ता० १९.१२-१२ को लिखा था।

१ जिसकी प्रतिमा की हम पूजा करते हैं उसने सम्भव है कुछ बुराइयाँ भी अपने जीवन में की हों। उसकी प्रतिमा-पूजा से उसकी बुराइयों की नकल क्या वह पुजारी नहीं करेगा ?

ऐसे प्रश्न पहले बहुत बार पूछे जा चुके हैं। लेकिन मन्दिर प्रवेश के इस आन्दोलन ने फिर से प्रश्न छेड़ दिये हैं। इसलिए उनके उत्तर देने की आवश्यकता है। मैं यथासम्भव उत्तर दूँगा यद्यपि मुझे सन्देह है कि प्रश्नकर्ता के समान सन्देह करने वालों को इससे कहाँ तक सन्तोष होगा।

ऐसी तो कोई बात नहीं है कि किसी मन्दिर में दर्शनार्थ जाने का हिन्दुमात्र का धर्म है। किन्तु जो राममन्दिर में जाने के बिना राम का ध्यान नहीं कर सकता उसका वहाँ जाना धर्म है। भले ही कोई इसे बुरा कहे किन्तु ऐसे लोगों का राम विशेषतया उस मन्दिर में ही रहता है। उस पूजा करने वाले को मन्दिर में जाने ही से शांति मिलेगी। मैं उसकी श्रद्धा में कभी विक्षेप नहीं डालूँगा।

पहले प्रश्न के उपप्रश्न में दर्शन और अनुकरण का मुकाबला किया गया है। यह ठीक नहीं। क्योंकि दर्शन का हेतु अनुकरण के हेतु से भिन्न है। दर्शन अनुकरण का सहायक है। राम की प्रतिमा का ध्यान करके मैं राम के समान बनना चाहता हूँ इसलिए दर्शन अच्छा या अनुकरण ऐसा प्रश्न नहीं किया जा सकता। लाखों को अनुकरण के लिये दर्शन आवश्यक है।

दूसरे प्रश्न में शिक्षक महोदय ने मन्दिर के रहस्य को नहीं पहचाना है। जब हम किसी व्यक्ति को नमस्कार करते हैं तब वह पारस्परिक शिष्टाचार का लक्षण हो सकता है। उसमें और कोई विशेष गुण नहीं है। परन्तु लोग तो आत्मशुद्धि और आत्म शांति के लिए मन्दिर में जाते हैं। मन्दिर में जाने से मनुष्य

अपने आन्तरिक गुणों का विकास करता है पापों को धोता है हृदय का परिवर्तन करता है। सभी के लिए ऐसा ही होता है यह कहने का यहां अभिप्राय नहीं। लेकिन मन्दिर जाने में यह सब रहस्य भरा है और हजारों ने इसका अनुभव किया है। मन्दिर में हजारों भक्तों ने भगवान् का दर्शन किया है जैसे तुलसीदासजी ने और अन्धे भक्त सूरदासजी ने। एक मनुष्य को हम पत्र लिखते हैं। उसका भला बुरा उत्तर मिलता भी है और नहीं भी मिलता। वह पत्र आखिर कागज का टुकड़ा ही है। ईश्वर को पत्र लिखने में न कागज चाहिए न कलम दवात ही और न शब्द ही। ईश्वर को जो पत्र लिखा जाता है उसका उत्तर न मिले यह सम्भव ही नहीं। उस पत्र का नाम पत्र नहीं प्रार्थना है पूजा है। मन्दिर में जाकर ऐसे पत्र करोड़ों लोग प्रतिदिन लिखते हैं और उन्हें श्रद्धा है, कि उनके पत्र का उत्तर भगवान् ने दे ही दिया है। यह निरपवाद सिद्धान्त है — भक्त भले ही उसका कोई बाह्य प्रमाण न दे सके। उसकी श्रद्धा ही उसका प्रमाण है। उत्तर प्रार्थना में ही सदा से रहा है भगवान् की ऐसी प्रतिज्ञा है।

यहां यह भी मुझे कह देना चाहिए कि मैं मन्दिर मस्जिद और गिरजे में कोई भेद नहीं मानता। भक्त की श्रद्धा जिधर ले जायगी उधर ही वह अपने सिरजनहार का दर्शन करेगा। जैसे जिसकी श्रद्धा होगी वैसा ही फल मिलेगा। यही बात गीता ने कुरान ने बाइबिल ने भिन्न भिन्न भाषा और भिन्न २ शब्दों में कही है। करोड़ों मनुष्य अव्यक्त के दर्शन करने की आशा में जाते हैं और नित्य कुछ न कुछ तृप्ति पाकर लौटते हैं।

तीसरा प्रश्न पूछकर प्रश्नकर्ता ने अवतारविषयक रहस्य का

अज्ञान प्रकट किया है। उन्हें यह जान लेना चाहिए कि भगवान् भक्त की दृष्टि में अवतारमात्र निर्दोष रहते हैं। आलोचक का कृष्ण भले ही व्यभिचारी हो धूर्त हो किन्तु भक्त के हृदय में तो कृष्ण अवतार ही है। लाखों भक्त कीर्तन से कृष्णदर्शन से और कृष्णध्यान से निष्पाप बने हैं और बन रहे हैं। सामान्य अनुभव में भी यही बात आती है। अपने बीरों को हम निर्दोष मानते हैं भले ही उनके शत्रु उन्हें कसा मानें। हां यह हो सकता है और होता ही है, कि दोषों को हम गुणरूप मानते हैं। इसमें मन्दिर का दोष नहीं न मूर्ति का हो है बल्कि पुजारी का है। निराकार ईश्वर में भी हम गुणों का आरोपण करते हैं, किन्तु अनुभव बताता है कि कई गुण वस्तुत दोष थे। आज भी निराकार ईश्वर को हिंसक मानकर हिंसा को धर्म मानने वाले लोग कहां नहीं पाये जाते हैं? बात यह है कि जैसे भगवान् वैसे ही भक्त होते हैं। और ठीक इसी तरह जैसे भक्त वैसे ही भगवान् बने रहते हैं। ऐसा क्यों होता है यह मैं नहीं जानता। शायद कोई न जानते हों ऐसा मुझे संदेह है परन्तु ऐसा है, यह तो प्रत्यक्ष है। किन्तु यह विषय ही भिन्न है। मन्दिर और मूर्ति के साथ उसका कोई सबन्ध नहीं।

मेरी बुद्धि और हृदय ने बहुत पहले यह अनुभव कर लिया था, कि भगवान का सर्वोत्तम नाम सत्य ही है। मैं 'राम' नाम से सत्य पहचानता हूं। अत्यन्त कठोर परीक्षा की घड़ियों में इस एक ही नाम ने मेरी रक्षा की है और अब भी कर रहा है। यह लिखते हुए मुझे अपने बाल्यावस्था की एक बात याद आती है। हमारे घर के नजदीक रामजी का एक मन्दिर था। मैं बड़े भाव से नित्य वहां जाता था। मुझे विश्वास था कि वहां जाकर मैं

मूर्ति भी मानता हूं। बात यह है कि मनुष्य के विचारों का यथार्थ और पूर्ण अर्थ भाषा कभी दे ही नहीं सकती। अतः शब्दों का विस्तार तो होता ही रहेगा। प्रत्येक अर्थ के लिये नया शब्द बनाना असम्भव है और अनावश्यक भी। जब विरोधी विचार व्यक्त करने के लिये एक शब्द ही का प्रयोग किया जाता है तब शंका और अनर्थ का भय अवश्य रहता है। यहां तो ऐसा कोई भय नहीं है। मैंने तो यहां केवल लौकिक अर्थ का ही विस्तार किया है वस्तुतः विस्तार नहीं किन्तु उसका स्पष्टिकरण ही किया है।

लौकिक अर्थ पाषाण को परमेश्वर बना देता है। लेकिन सही बात यह है, कि पाषाण स्वतः परमेश्वर नहीं परन्तु पाषाण में परमेश्वर है। लोग कहेंगे कि यदि पाषाण में परमेश्वर है तो फिर पाषाण परमेश्वर क्यों नहीं? शरीर आत्मा नहीं है शरीर में आत्मा है तो भी करोड़ों लोग ऐसा कहते व मानते हैं कि शरीर ही आत्मा है। उनकी दृष्टि से वह भी सत्य है अथवा उनके कथन में भी सत्य का अंश है अर्थात लौकिक भाव सर्वदा त्याज्य नहीं है। जैसे विचार का विस्तार होगा वैसे ही शब्दों के अर्थ का विस्तार होता जायगा। मैं जो कुछ कह रहा हू वह कोई नई बात नहीं है। मेरे विचारों में ही कुछ नवीनता सी देखने में आती है। यह अनिवार्य है। क्योंकि मेरी यही साधना है। सत्य की खोज में विचार करना ही पड़ता है। संकुचित अर्थ से संतोष नहीं होता। ध्यान करने से उसी शब्द के उसी अर्थ में ही संतोष का बीज देखने में आता है।

कहा जाता है कि वेद केवल 'ओम्' का ही विस्तार है। गोसाई तुलसीदासजी कहते हैं, राम ही ओम् है राम ही वेद है।

अनेक होते हुए भी एक है। इस संसार में अनेक धर्म मजहब हैं। मेरा विश्वास है कि वे सभी धर्म सत्य हैं। लेकिन जब तक ये विविध धर्म मौजूद हैं और उनमें से किसी भी एक धर्म के मानने वाले हैं तब तक उस धर्म के साथ हमारे कुछ विशेष कर्तव्य तो रहेंगे ही। इसका यह अर्थ नहीं है कि मैं उस दशा में अपने मुसलमान भाइयों ईसाई भाइयों पारसी यहूदी या दूसरे भाइयों की सेवा नहीं करूंगा। मेरा मतलब तो इतना ही है कि अगर मैं जिस धर्म को गहे हुए हूं उसके प्रति कर्तव्यपालन से चूक गया तो फिर किसी भी धर्म के साथ ऐक्य का अनुभव न कर सकूंगा। आप और मैं जीवित हैं और मैं आपसे बोल रहा हूं, इस सत्य से भी अधिक मैं ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास करता हूं। अपने अभिप्राय को जरा अच्छी तरह समझने के लिए मैं एक उदाहरण देता हूं। यों ऊपर से देखने में तो आपसे बोल रहा हूं और आप सुन रहे हैं। और वास्तविकता में आपका हृदय और आपका मन कहीं दूसरी जगह जमा जा सकता है। हो सकता है कि मेरा हृदय भी कहीं अन्यत्र लगा हुआ हो और मेरा भी मन कहीं दूसरी जगह हो तब इस अवस्था में मेरा बोलना और आपका सुनना एक प्रकार का प्रवचन ही होगा। इसलिए मेरे भाषण और आपके श्रवण की यों प्रत्यक्ष प्रतीति तो है, किन्तु संभवतः वे दोनों क्रियाएं सत्य नहीं हैं। मगर मेरा हृदय मेरा वचन और मेरा कर्म तो परमशक्ति से निश्चय ही बंधा हुआ है, जिसे ईश्वर, अल्लाह राम या कृष्ण आदि नामों से पुकारते हैं। अब आप मेरे इस सत्य को सहज ही समझ जायेंगे कि मेरे लिए इस सभा के प्रत्यक्ष अस्तित्व की सत्यता से भी ईश्वर विश्वास अधिक सत्य है।

(हरिजन सेवक अंक ५२ ता १६ फरवरी १९३४ पृष्ठ १)

सभी तरह की तालीम देना जरूरी नहीं। उसमें की कुछ तालीम लेना जरूरी हो सकता है।

सब शान्तिदलों के लिए एक चीज आम यानी सामान्य होनी चाहिये। शान्तिदल के हर एक मेम्बर का ईश्वर में अटल विश्वास होना चाहिये। उसमें यह श्रद्धा होनी चाहिये कि ईश्वर ही सच्चा साथी है और वही सबका सिरजनहार है कर्त्ता है। इसके बिना जो शान्ति-सेनायें बनेंगी मेरे खयाल में बेजान होंगी। ईश्वर को आप अल्लाह के नाम से पहचानें अहुरमज्द कहें जेहोवा कहें जीता जागता कायदा कहें राम कहें रहमान कहें किसी भी नाम से पुकारें, मगर उसकी शक्ति का उपयोग तो आपको करना ही है। ऐसा आदमी किसी को मारेगा नहीं बल्कि खुद मरकर जीतेगा और जी जायगा।

जिस आदमी के लिये यह कानून एक जीती-जागती चीज बन जायगी उसको वक्त के मुताबिक अकल भी अपने आप सूझती रहेगी।

फिर भी अपने अनुभव से यहां कुछ नियम देता हूं —

१ सेवक अपने साथ कोई भी हथियार न रक्खे।

२ वह अपने बदन पर ऐसी कोई निशानी रक्खे जिससे फौरन पता चले कि वह शान्तिदल का मेम्बर है।

३ सेवक के पास घायलों वगैरा की सार-सम्भाल के लिए दुरुस्त काम देने वाली चीज रहनी चाहियें। जैसे पट्टी कैंची छोटा चाकू, सूई वगैरा।

४ सेवक को ऐसी तालीम मिलनी चाहिये जिससे वह घायलों को आसानी से उठाकर ले जा सके।

५. जलती आग को बुझाने की विद्या जाने या झुलसे बिना आग वाली जगह में जाने की ऊपर चढ़ने और उतरने की कला सेवक में होनी चाहिये।

खुदा है? नहीं सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापी ईश्वर तो एक ही है। उसके नाम कई हैं और उसका जो नाम हमें सबसे ज्यादा प्यारा होता है उस नाम से हम उसको याद करते हैं।

'मेरा राम' हमारी प्रार्थना के समय का राम वह ऐतिहासिक राम नहीं है, जो दशरथ का पुत्र और अयोध्या का राजा था। वह तो सनातन अजन्मा और अद्वितीय राम है। मैं उसी की पूजा करता हूं। उसी की मदद चाहता हूं। आपको भी यही करना चाहिये। वह सब किसी का है। इसलिए मेरी समझ में नहीं आता कि क्यों किसी मुसलमान को या दूसरे किसी को उसका नाम लेने में एतराज होना चाहिये? लेकिन यह भी कोई जरूरी नहीं कि वह रामनाम के रूप में ही भगवान् को पहचानें उसका नाम ले। वह मन-ही मन अल्लाह या खुदा का नाम भी इस तरह जप सकता है कि जिसमें बेसुरापन न आवे।। (ह० से० ५ ५ १६४६)

राम ईश्वर का एक नाम है

स०—आप कहा करते हैं कि प्रार्थना में प्रयुक्त 'राम' का आशय दशरथ के पुत्र राम से नहीं है। आपका आशय 'जगन्नियंता' से होता है। हमने भलीभांति देखा है कि 'रामधुन' में 'राजाराम, सीताराम' 'राजाराम सीताराम' का कीर्तन होता है और जयकार भी 'सियापति रामचन्द्र की जय' का लगता है। म विनम्र भाव से पूछता हूं कि यह सियापति राम कौन है? यह राजाराम कौन है? क्या वह दशरथ के सुपुत्र राम नहीं हैं ? ऊपर की पंक्तियों का अर्थ तो स्पष्टतया यही लगता है कि प्रार्थना में आराध्य जानकी-पति दशरथ-पुत्र राम ही हैं।

ज०—ऐसे प्रश्न का उत्तर मैं दे चुका हूं मगर इसमें कुछ नया भी है जो उत्तर की अपेक्षा रखता है। रामधुन में 'राजाराम' 'सीताराम

बना देता है, और उसे अपने को अन्दर से निरोग बनाने की संजीवनी हासिल करा देता है। जब कोई बीमारी इस हद तक पहुंच जाती है कि उसे मिटाना मुमकिन नहीं रहता उस वक्त भी रामनाम आदमी को उसे शान्त और स्वस्थ भाव से सह लेने की ताक़त देता है।" उन्होंने और कहा "जिस आदमी को रामनाम में श्रद्धा है वह जैसे-तैसे अपनी जिन्दगी के दिन बढ़ाने के लिये नामी-गरामी डाक्टरों और वैद्यों के दर की खाक नहीं छानेगा और यहां से वहां मारा-मारा नहीं फिरेगा। रामनाम डाक्टरों और वैद्यों के हाथ टेक देने के बाद लेने की चीज भी नहीं। वह तो आदमी को डाक्टरों और वैद्यों के बिना भी अपना काम चला सकने वाला बनाने की चीज है। रामनाम में श्रद्धा रखने वाले के लिये वही उसकी पहली और आखिरी दवा है। (ह से २-६ ४६)

फिर रामनाम

कुछ दिन हुए, एक दोस्त को एक खत मिला उन्होंने वह मेरे पास भेजा है और जवाब मांगा है। खत लम्बा है इसलिये यहाँ सिर्फ़ मतलब की बातें नकल करता हूं।

'वह (गांधीजी) हिन्दुस्तान प्रेमी हैं पर यह बात समझ में नहीं आती कि हररोज जलसे में प्रार्थना करके और रामनाम' की धुन लगाकर अपने मुल्क के दूसरे मजहब वालों का दिल वे क्यों दुखाते हैं ? उन्हें यह समझना चाहिए कि हिन्दुस्तान में बहुत से मजहब हैं और अगर वह जनता में हिन्दू देवताओं का हवाला देकर बोलेंगे तो पुराने ख्याल के लोगों को ग़लतफ़हमी होगी। और मुस्लिम लीग की यह भी शिकायत है—रामराज क़ायम करना उनका एक प्रिय जुमला है। एक सच्चे मुसलमान को यह कैसा लगेगा ?"

हजारवीं दफ़ा फिर दुहराना पड़ता है कि रामनाम परमात्मा के

'आप हमें भगवान् से यह प्रार्थना करने के लिए कहते हैं कि वह दक्षिण अफ्रीका के गोरों को अच्छी अक्ल दे और वहां के हिन्दुस्तानियों को अपने उद्देश्य पर डटे रहने का साहस और शक्ति दे। इस तरह की प्रार्थना तो किसी व्यक्ति से ही की जा सकती है। अगर भगवान् सब जगह मौजूद रहने वाली और सबसे बड़ी शक्ति है तो उससे प्रार्थना करने से क्या लाभ ? वह तो अपना काम करता ही रहता है।"

इस विषय पर मैं पहले लिख चुका हूं। लेकिन किसी न किसी भाषा में यह सवाल बार-बार दुहराया जाता है। इसलिए इसको और ज्यादा समझने से संभव है किसी को मदद मिले। मेरे विचार से राम रहमान अहुरमज्द ईश्वर या कृष्ण ये सब इन्सान के रखे हुए उसी एक शक्ति के नाम हैं जो सबसे बड़ी शक्ति है। अधूरा होते हुए भी आदमी पूर्णता के लिए लगातार कोशिश करे यह उसके लिए कुदरती बात है। इस कोशिश में वह खयाली पुलाव भी पकाने लगता है। और जिस तरह एक बच्चा उठने की कोशिश करता है बार-बार गिरता है और आखिरकार चलना सीख जाता है उसी तरह आदमी अपनी समूची अक्ल के बावजूद अनादि और अनन्त ईश्वर के मुकाबले एक बच्चा ही है। ऊपर से यह बात बे सिर पैर की लगे लेकिन दरअसल वह बिलकुल सच है। आदमी अपनी टूटी फूटी भाषा में ही ईश्वर का बखान कर सकता है। सच पूछा जाय तो उस शक्ति का,जिसे ईश्वर कहते हैं बखान नहीं किया जा सकता। न ही उस शक्ति को आदमी से अपना बखान कराने की जरूरत है। आदमी को एसा साधन चाहिए जिससे वह समन्दर से भी बड़ी शक्ति का बखान कर सके। अगर यह दलील ठीक है तो यह पूछना जरूरी नहीं कि हम उसकी प्रार्थना क्यों करें ? आदमी अपनी बुद्धि

नहीं लेता। यह मुझे चुभता है क्योंकि आपका कहना तो यह है कि सब हिस्सा लें और यह ठीक भी है। तो क्या आप ऐसा कुछ नहीं कर सकते जिससे सब हिस्सा ले सकें ?

सबका अर्थ मैं बता चुका हूं। जो लोग दिल से हिस्सा ले सकें जो एक सुर में गा सकें वे ही हिस्सा लें बाकी शान्त रहें। लेकिन यह तो छोटी बात हुई। बड़ी बात तो यह है कि दशरथ-नन्दन अवि नाशी कैसे हो सकते हैं ? यह सवाल तो स्वयं तुलसीदासजी ने उठाया था और उन्होंने इसका जवाब भी दिया था। ऐसे सवालों का जवाब बुद्धि से नहीं दिया जा सकता यह बात दिल की बात है। दिल की बात दिल ही जाने। शुरू में मैंने राम को सीता-पति के रूप में पाया। लेकिन जैसे-जैसे मेरा ज्ञान और अनुभव बढ़ता गया वैसे वैसे मेरा राम अविनाशी और सर्वव्यापी बना है और है। इसका मतलब यह कि वह सीता-पति बना रहा और साथ ही सीता-पति के माने भी बढ़ गये। संसार ऐसे ही चलता है। जिसका राम-दशरथ राजा का कुमार ही रहा उसका राम सर्वव्यापी नहीं हो सकता लेकिन सर्वव्यापी राम का बाप दशरथ भी सर्वव्यापी बन जाता है। कहा जा सकता है कि यह सब मनमानी है—'जैसे जिसकी भावना वैसा उसको होय' दूसरा कोई चारा मुझे नजर नहीं आता। अगर आखिरकार सब धर्म एक हैं तो हमें सबका एकीकरण करना है। अलग तो पड़ ही हैं और अलग मानकर हम एक दूसरे से लड़ते हैं। और, जब थक जाते हैं, तो नास्तिक बन जाते हैं और फिर सिवा 'हम' के न ईश्वर रहता है, न कुछ और! लेकिन जब हम समझ जाते हैं तो हम कुछ नहीं रह जाते ईश्वर ही सब कुछ बन जाता है—वह दशरथनन्दन सीतापति भरत व लक्ष्मण का भाई है भी और नहीं भी। जो दशरथ-नन्दन सीतापति राम को न मानते हुए भी सबके

राम-रहीम

एक भाई ने पूछा है:—अगर राम और रहीम दोनों एक ही ईश्वर के नाम है तो दोनों क्यों इस्तेमाल किये जाय? क्या राम से काम न चलेगा? मेरा जवाब यह है कि हिन्दुधर्म के ग्रन्थों में ईश्वर के हजार नाम माने गये हैं। अगर उसके ४० करोड़ नाम भी हों तो क्या बिगड़ता? हर आदमी को आजादी है कि वह अपने आध्यात्मिक सन्तोष या रूहानी तसल्ली के लिए भगवान् को जितने भी नामों से पुकारना चाहे पुकारे। मुझ पर यह इलजाम लगाया है कि मैं मुसलमानों को खुश करने की कोशिश करता हूं। अगर मैं ऐसा करूं तो हर्ज क्या है? मुमकिन है कुछ मुसलमान मुझे नुकसान पहुंचाना चाहें लेकिन इसका मतलब यह तो नहीं होता कि बदले में मैं भी उनका नुकसान करूं। एक मुसलमान लड़की—रेहाना तैयबजी ने मुझे कुरानशरीफ की आयत सिखाई थी। उसे मैं कभी छोड़ न सका। जब मैंने यरवदा जेल में अपना पिछला उप वास तोड़ा तब डा॰ गिलडर ने जिन्दावस्ता से एक श्लोक पढ़ा था तब से पारसी श्लोक भी मेरी प्रार्थना में शामिल कर लिया गया। मैं निश्चय के साथ कहता हूं कि ये प्रार्थनायें करने और राम-धुन गाने से मैं रामनाम की महिमा या बड़ाई को घटाता नहीं बल्कि बढ़ाता हूं। (ह॰ से॰ २७ अप्रैल १९४७)

राम-रहीम

राम रहीम के नामों पर किसी का एतराज करना गलत है, क्योंकि तुलसीदासजी ने तो कहा है कि राम-नाम में जो दो अक्षर हैं, उसी में सब कुछ है। हम चाहे राम कहें या रहीम कृष्ण कहें या करीम और गॉड कहें या खुदा मतलब तो उसी एक ईश्वर से है।

कल जो भजन गाया गया उसमें बालक राम का जिक्र था। तुलसीदासजी ने तो रामनाम की इतनी महिमा बढ़ाई है कि हिन्द

को ठीक ठीक पढ़ सकता है और इसलिए वही जानता है कि उसमें रावण कौन है। मगर हर आदमी अपने आपको राम समझने का गलत दावा करने लगे तो रावण कौन होगा ? अपूर्ण आदमी दूसरे अपूर्ण आदमियों के जज नहीं बन सकते। हिन्दुओं का मुसलमानों पर और मुसलमानों का हिन्दुओं पर हमला करना कायरता और अधर्म है। वह रास्ता हिन्दू धर्म और इस्लाम की बरबादी का रास्ता है। इसलिए मुझे खुशी है कि एक सनातनी हिन्दू के नाते मैं हिन्दुओं का ही प्रतिनिधित्व नहीं करता बल्कि मुसलमानों और दूसरे धर्मवालों का भी करता हूं। (ह से २ ११ ४७)

धर्म की झलक

छै सात साल की उम्र से लेकर १६ वर्ष तक मैंने विद्याध्ययन किया परन्तु स्कूल में कहीं धर्म-शिक्षा न मिली। जो चीज शिक्षकों के पास से सहज मिलनी चाहिए, वह न मिली। फिर भी वायुमंडल में तो कुछ-कुछ धर्म प्रेरणा मिला ही करती थी। यहां धर्म का व्यापक अर्थ करना चाहिए। धर्म से मेरा अभिप्राय है आत्मभान से आत्मज्ञान से।

वैष्णव-सम्प्रदाय में जन्म होने के कारण बार बार 'वैष्णव मन्दिर' जाना होता था। परन्तु उसके प्रति श्रद्धा उत्पन्न न हुई। मन्दिर का वैभव मुझे पसन्द न आया। मन्दिरों में होने वाले अनाचारों की बातें सुन कर मेरा मन उसके सम्बंध में उदासीन हो गया। वहां से मुझे कोई लाभ न मिला।

परन्तु जो चीज मुझे इस मन्दिर से न मिली वह अपनी दाई के पास से मिल गई। वह हमारे कुटुम्ब में पुरानी नौकरानी थी। उसका प्रेम मुझे आज भी याद आता है। मैं पहले कह चुका हूं कि मैं भूतप्रेत आदि से डरा करता था। इस रम्भा बाई ने मुझे बताया कि इसकी

दवा 'रामनाम' है। किन्तु रामनाम श्रद्धा थी। इसलिये बचपन में मैंने भूत आदि के रामनाम का जप शुरू किया। यह सिलसिला भी जारी न रहा परन्तु जो बीजारोपण बचपन में हुआ वह व्यर्थ न गया। रामनाम जो आज मेरे लिए एक अमोघ शक्ति है उसका कारण वह रंभा बाई का बोया हुआ बीज ही है।

परन्तु जिस चीज ने मेरे दिल पर गहरा असर डाला, था रामायण का पारायण। पिताजी की बीमारी का पोरबन्दर में गया था। वहां वह रामजी के मन्दिर में की रामायण सुनते। कथा कहने वाले थे रामचन्द्रजी के बीलेश्वर के लाधा महाराज। उनके सम्बन्ध में यह प्रसिद्ध थी कि उन्हें कोढ़ हो गया था। उन्होंने कुछ दवा सिर्फ बीलेश्वर महादेव पर चढ़े हुए बिल्व पत्रों को अंगों पर बांधते रहे और रामनाम का जप करते रहे, उनका कोढ़ समूल नष्ट हो गया। यह बात चाहे सच हो या हम सुनने वालों ने तो सच ही मानी। हां यह सच है कि लाधा महाराज ने जब कथा प्रारम्भ की थी तब उनका बिलकुल नीरोग था। लाधा महाराज का स्वर मधुर था। दोहा चौपाई गाते और अर्थ समझाते। खुद उसके रस में जाते और श्रोताओं को भी लीन कर देते। मेरी अवस्था उस कोई १३ साल की होगी पर मुझे याद है कि उनकी मेरा बहुत मन लगता था। रामायण पर मेरा जो अत्यन्त प्रेम उसका पाया यही रामायण-श्रवण है। आज मैं तुलसीदास रामायण को भक्ति-मार्ग का सर्वोत्तम ग्रन्थ मानता हूं।

(आत्मकथा भाग १ अध्याय १ धर्म की झांकी पृष्ठ

नाम महिमा

नाम की महिमा के बारे में तुलसीदासजी ने कुछ भी कहने को बाकी नहीं रक्खा है। द्वादशमन्त्र अष्टाक्षर इत्यादि सब इस मोह पाश में फँसे हुए मनुष्य के लिए शान्तिप्रद है, इसमें कुछ भी शंका नहीं है। जिससे जिसको शान्ति मिले उस मंत्र पर वह निर्भर रहे। परन्तु जिसको शान्ति का अनुभव ही नहीं है और जो शांति की खोज में है उसके लिए तो अवश्य ही रामनाम पारस-मणि बन सकता है। ईश्वर के सहस्र नाम कहे हैं उसका अर्थ यह है कि उसके नाम अनन्त हैं गुण अनन्त हैं। इसी कारण ईश्वर नामातीत है और गुणातीत भी है। परन्तु देहधारी के लिये नाम का सहारा अत्यावश्यक है और इस युग में मूढ़ और निरक्षर भी रामनाम रूपी एकाक्षर मंत्र का सहारा ले सकता है। वस्तुतः राम उच्चारण में एकाक्षर ही है और ॐकार और राम में कोई फर्क नहीं है। परन्तु नाम महिमा बुद्धिवाद से सिद्ध नहीं हो सकती श्रद्धा से अनुभव साध्य है।

२ तरणतारण राम

*विषय जीतने का सुवर्ण नियम 'रामनाम' के सिवा कोई नहीं है।

"रामनाम उन लोगों के लिए नहीं है जो ईश्वर को हर तरह से फुसलाना चाहते हैं और हमेशा अपनी रक्षा की आशा उससे लगाये रहते हैं।

"मैं संसार में यदि व्यभिचारी होने से बचा हूं तो रामनाम की बदौलत --जब जब मुझ पर विकट प्रसंग आये हैं मैंने रामनाम लिया है और मैं बच आया हूं।

* 'कल्याण' के रामनामांक के लिये लिखित और वहीं में प्रकाशित।

"स्वप्न में ब्रह्मचर्य भंग हुआ तो उसका प्रायश्चित्त [illegible] सावधानी और जागृति याने ही रामनाम है।"

"विकारी विचार से बचने का एक अमोघ उपाय रामनाम है।"

"कोई भी व्याधि हो अगर मनुष्य हृदय से रामनाम ले तो व्याधि नष्ट होनी चाहिये। रामनाम यानी ईश्वर, खुदा, अल्लाह, गॉड।"

"रामनाम पोथी का बैंगन नहीं, यह तो अनुभव की प्रसादी है। जिसने उसका अनुभव प्राप्त किया है, वही यह दवा दे सकता है, दूसरा नहीं।"

"प्राकृतिक चिकित्सा में मध्य बिन्दु तो राम ही है न? रामनाम से आदमी सुरक्षित बनता है। शर्त यह है कि नाम भीतर से निकलना चाहिये।"

"सत्य और अहिंसा पर अमल करने के लिए जितनी [illegible] हैं उनमें से अच्छी दवाई रामनाम है।"

"मेरे राम का जन्तर मन्तर से कोई वास्ता नहीं।"

"सच्चा डॉक्टर तो राम ही है।"

ब्रह्मचर्य

एक सज्जन पूछते हैं "ब्रह्मचर्य का अर्थ क्या है? क्या उसका सोलहों आने पालन संभवनीय है? यदि हां हो तो क्या आप उसका पालन करते हैं?"

ब्रह्मचर्य का पूरा और वास्तविक अर्थ है ब्रह्म की खोज। ब्रह्म सब में व्याप्त है। अतएव उसकी खोज अन्तर्ध्यान और उससे उत्पन्न अन्तर्ज्ञान से होती है। यह अन्तर्ज्ञान इन्द्रियों के पूर्ण संयम के बिना असम्भव है। अतएव सब इन्द्रियों के तन मन वचन से सब समय और सब क्षेत्र में संयम करने को ब्रह्मचर्य कहते हैं।

ऐसे ब्रह्मचर्य का पूर्ण रूप से पालन करने वाली स्त्री या पुरुष

बिल्कुल निर्विकार होता है। इस कारण ऐसे निर्विकार स्त्री पुरुष ईश्वर के नजदीक रहते हैं, वे ईश्वरवत् हैं।

ऐसे ब्रह्मचर्य का तन मन और वचन से पालन किया जा सकता है इस बात में मुझे जरा भी संदेह नहीं। मुझे कहते हुए दुःख होता है कि इस ब्रह्मचर्य की पूर्ण अवस्था को मैं अभी नहीं पहुंच पाया हूं। पहुंचने के प्रयत्न निरन्तर कर रहा हूं। इसी शरीर के द्वारा इस स्थिति को पहुंचने की आशा मैंने छोड़ नहीं दी है। तन पर तो मैंने अपना कब्जा कर लिया है। जागृत अवस्था में मैं सावधान रह सकता हूं। वाचा के समय का पालन करना भी ठीक ठीक जान गया हूं। विचार पर अभी मुझे बहुत कुछ कब्जा करना है। जिस समय जिस बात का विचार करता हो उस समय उसके अलावा दूसरे विचार भी आते हैं। इससे विचारों में परस्पर द्वन्द्व हुआ करता है।

फिर भी जागृत अवस्था में विचारों को परस्पर टक्कर लेने से रोक सकता हूं। गन्दे विचार नहीं आ सकते। यह मेरी स्थिति कही जा सकती है। नींद में अनेक प्रकार के विचार आते हैं। अकल्पित सपने भी आते हैं और कभी कभी इसी देह में की हुई बातों की वासना भी जागृत होती है। वे विचार जब गन्दे होते हैं तब स्वप्नदोष भी होता है। यह स्थिति विकारवान जीवन को ही हो सकती है। पर मेरे विचार के विकार क्षीण होते जा रहे हैं। हां उनका नाश नहीं हो पाया है। यदि मैं विचारों पर भी साम्राज्य कर सका होता तो पिछले दस बर्षों में जो तीन रोग पसली का वरम पेचिश और अपेंडिक्स का वरम मुझे हुए, वे कभी न होते। मैं मानता हूं कि निरोगी आत्मा का शरीर भी निरोगी होता है। अर्थात् ज्यों ज्यों आत्मा निरोग निर्विकार होती जाती है, त्यों त्यों

शरीर निरोगी होता जाता है। इसका अर्थ यह नहीं है कि निरोगी शरीर का अर्थ बलवान् शरीर हो। बलवान् आत्मा क्षीण शरीर में ही वास करती है। ज्यों ज्यों आत्मबल बढ़ता है, त्यों त्यों शरीर की क्षीणता बढ़ता है। पूर्ण निरोगी शरीर बहुत क्षीण भी हो सकता है। बलवान् शरीर में बहुतांश में रोग रहते हैं। रोग न हो तो भी वह शरीर संक्रामक रोगों का शिकार तुरन्त हो जाता है परन्तु पूर्ण निरोग शरीर पर उनका असर नहीं हो सकता। शुद्ध खून में ऐसे जन्तुओं को दूर रखने का गुण होता है।

ऐसी अद्भुत दशा दुर्लभ जरूर है। नहीं तो अबतक मैं वहां पहुंच गया होता। क्योंकि मेरी आत्मा कहती है कि ऐसी स्थिति प्राप्त करने के लिए जिन उपायों से काम लेने की आवश्यकता है उनसे मैं मुख नहीं मोड़ता हूं। ऐसी कोई भी बाह्य वस्तु नहीं है जो मुझे उससे दूर रखने में समर्थ हो। परन्तु पिछले संस्कारों को धोना सबके लिये सहल नहीं होता। इससे देर हो रही है फिर भी मैं बिल्कुल निराश नहीं हुआ हूं। क्योंकि मैं निर्विकार अवस्था की कल्पना कर सकता हूं। उसकी धुंधली झलक देख भी सकता हूं और जो प्रगति मैंने अब तक की है वह मुझे निराश करने के बदले आशावान बनाती है। फिर भी यदि मेरी आशा पूर्ण हुए बिना ही मेरा शरीर पात हो जाय तो मैं अपने को निष्फल न मानूंगा। जितना विश्वास मुझे इस देह के अस्तित्व पर है उतना ही विश्वास मुझे पुनर्जन्म पर है। इससे मैं जानता हूं कि थोड़ा प्रयत्न भी व्यर्थ नहीं जाता।

इतने आत्मानुभव के वर्णन का कारण यही है कि जिन्होंने मुझे पत्र लिखे हैं उनको तथा उनके सदृश दूसरों को धीरज रहे और आत्म-विश्वास बढ़े। सबकी आत्मा एक है। सबकी आत्मा की

शक्ति एकसी है। कितने ही लोगों की शक्ति प्रकट हो गई है, कितनों की बाकी है। प्रयत्न करने से उन्हें भी यह अनुभव हुए बिना न रहेगा।

यहां तक मैंने व्यापक अर्थ में ब्रह्मचर्य का विवेचन किया। ब्रह्मचर्य का लौकिक अथवा प्रचलित अर्थ तो इतना माना जाता है कि विषयेन्द्रिय का मन, वचन काया के द्वारा संयम। यह अर्थ वास्तविक है। क्योंकि उसका पालन करना बहुत कठिन माना गया है। स्वादेन्द्रिय के संयम पर इतना जोर नहीं दिया गया इससे विषयेन्द्रिय का संयम इतना मुश्किल बन गया है प्रायः असंभव हो गया है। फिर रोग ग्रसित शरीर में हमेशा विषय वासना अधिक रहती है, यह वैद्यों का अनुभव है। इससे भी इस रोगग्रस्त समाज को ब्रह्मचर्य कठिन मालूम होता है।

ऊपर में क्षीण किन्तु नीरोगी शरीर के विषय में लिख चुका हूं। उसका अर्थ यह नहीं करना चाहिए कि शरीरबल प्राप्त न किया जाय। मैंने तो सूक्ष्मतम ब्रह्मचर्य की बात अपनी अति प्राकृत भाषा में लिखी है। इससे शायद गलतफ़हमी हो। जो सब इन्द्रियों के पूर्ण संयम का पालन करना चाहता है उसे अन्त को शरीर-क्षीणता का अभिनन्दन अवश्य करना पड़ेगा। जब शरीर का मोह और महत्व क्षीण हो जायगा तब शरीरबल की इच्छा रह ही नहीं सकती। परन्तु विषयेन्द्रिय को जीतने वाले ब्रह्मचारी का शरीर अति तेजस्वी और बलवान ही होना उचित है। यह ब्रह्मचर्य भी अलौकिक है। जिसकी विषयेन्द्रिय को स्वप्नावस्था में भी विकार न हो वह जगत् वन्दनीय है। इसमें शक नहीं कि उसके लिये दूसरा संयम सहज बात है।

इस ब्रह्मचर्य के सम्बन्ध में एक महाशय लिखते हैं— 'मेरी हालत

बलायमक है। दफ्तर में रास्ते में, रात को पढ़ते समय काम करते हुए, ईश्वर का नाम लेते हुए वही विचार आते हैं। मनके विचारों को किस तरह काबू में रखें ? स्त्रियों के प्रति मातृभाव कैसे उत्पन्न हो ? आंख से शुद्ध वात्सल्य की हो किरणें किस प्रकार निकलें ? दुष्ट विचार किस प्रकार निर्मूल हों ? ब्रह्मचर्य विषयक आपका लेख मैंने अपने पास रख छोड़ा है परन्तु इस जगह वह बिल्कुल उपयोगी नहीं होता।

यह स्थिति हृदयद्रावक है। बहुतों की यह स्थिति होती है। परन्तु जब तक मन उन विचारों के साथ लड़ता रहता है, तब तक भय रखने का कुछ कारण नहीं। आंख यदि बुरा काम करती हो तो उसे बन्द कर लेना चाहिये कान यदि बुरा काम करते हों तो उनमें रुई भर लेनी चाहिए। आंख को हमेशा नीचा रखके चलने की रीति अच्छी है। इसमें उसे दूसरी बातें देखने का अवसर ही नहीं मिलता। जहां गन्दी बातें होती हों अथवा गन्दा गाना गाया जाता हो वहां से उठ जाना चाहिए। स्वादेन्द्रिय पर खूब कब्जा रखना चाहिये।

मेरा अनुभव तो ऐसा है कि जिसने स्वाद को नहीं जीता वह विषय को नहीं जीत सकता। स्वाद को जीतना बहुत कठिन है। परन्तु इस विजय के साथ ही दूसरे विजय की संभावना है। स्वाद को जीतने के लिये एक तो नियम यह है कि मसालों का सर्वथा अथवा जितना हो सके त्याग करना चाहिए। और दूसरा अधिक बलवान् यह है कि भोजन स्वाद के लिये नहीं बल्कि केवल शरीर रक्षा भर के लिये हम खाते हैं----इस भावना की वृद्धि करें। हवा हम स्वाद के लिये नहीं लेते बल्कि श्वास के लिए। पानी प्यास बुझाने के लिए पीते हैं। इसी प्रकार खाना महज भूख बुझाने के

लिए जाना चाहिये। हमारे मां बाप लड़कपन से इसकी उलटी आदत डालते हैं। हमारे पोषण के लिए नहीं बल्कि अपना दुलार दिखाने के लिए हमें तरह तरह के स्वाद चखा कर हमारी आदत बिगाड़ते हैं। हमें ऐसे वायुमण्डल के खिलाफ लड़ने की आवश्यकता है।

परन्तु विषय जीतने का सुवर्ण नियम रामनाम अथवा दूसरे कई ऐसे मंत्र हैं। द्वादश मंत्र भी यही काम देता है। अपनी २ भावना के अनुसार मंत्र का जप करना चाहिए। मुझे लड़कपन में रामनाम सिखाया गया था। मुझे उसका सहारा बराबर मिलता रहा है इससे मैंने उसे सुझाया है। जो मंत्र हम जपें उसमें हमें तल्लीन हो जाना चाहिए। मंत्र जपते समय दूसरे विचार आवें तो परवा नहीं। फिर भी श्रद्धा रखकर मंत्र का जप यदि करते रहेंगे तो अन्त को अवश्य सफलता प्राप्त करेंगे। मुझे इसमें रत्ती भर शक नहीं है। यह मंत्र उसकी जीवन डोर होगी और उसे तमाम संकटों से बचावेगी। ऐसे पवित्र मंत्र का उपयोग किसी को आर्थिक लाभ के लिए हरगिज न करना चाहिए। इस मंत्र का चमत्कार है हमारी नीति को सुरक्षित रखने में और यह अनुभव प्रत्येक साधक को थोड़े ही समय में मिल जायगा। हां इतना याद रखना चाहिए कि तोते की तरह इस मंत्र को न पढ़ें। उसमें अपनी आत्मा लगा देनी चाहिए। तोते यन्त्र की तरह ऐसे मंत्र पढ़ते हैं। हमें ज्ञानपूर्वक पढ़ना चाहिए अवांछनीय विचारों को निवारण करने की भावना रख कर और ऐसा करने की मंत्र की शक्ति में विश्वास रख कर। (हिं नं २५ ५ १९२४)

ब्रह्मचर्य पालने की इच्छा रखनेवाला हर रोज नियम से सच्चे हृदय से रामनाम जपे और ईश्वर की कृपा चाहे। (११ ४ १९२६)

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जब तुम्हारे विकार तुम पर हावी होना चाहें, तब तुम घुटनों के बल झुक कर भगवान से मदद की प्रार्थना करो। रामनाम अचूक रूप से मेरी मदद करता है।" (अनीति की राह पर)

राम की मदद लेकर हमें विकारों के रावण का वध करना है और यह संभवनीय है। जो राम पर भरोसा रख सको तो तुम श्रद्धा रखकर निश्चिंतता के साथ घूमना। सबसे बड़ी बात यह है कि आत्मविश्वास कभी मत खोना। खाने का खूब ध्यान रखना और ज्यादा तरह का भोजन न करना।

(हि न १०-११ १९२८)

मेरा मकसद

मेरे प्रायश्चित और प्रार्थना का आज बीसवां दिन है। अब मैं शान्ति के राज्य से निकल कर तूफ़ानी दुनिया में पड़ने वाला हूं। ज्यों ज्यों मुझे इसका खयाल होता है त्यों त्यों मैं अपने को अधिकाधिक असहाय अनुभव करता हूं। कितने ही लोग एकता परिषद् के शुरू किये काम को पूरा करने के लिए मेरी ओर देखते हैं। कितने लोग राजनैतिक दलों को एकत्र करने की उम्मीद मुझसे रखते हैं। पर मैं जानता हूं कि मैं कुछ नहीं कर सकता। ईश्वर ही सब कुछ कर सकता है। प्रभो मुझे अपना योग्य साधन बना और अपना इच्छित काम मुझ से ले।

मनुष्य कोई चीज नहीं। नेपोलियन ने क्या क्या मनसूबे बांधे पर सेंटहेलेना में एक क़ैदी बन कर उसे रहना पड़ा। जर्मन सम्राट कैसर ने योरोप के तख्त पर अपनी नजर गड़ाई पर आज वह एक मामूली आदमी है। ईश्वर को यही मंजूर था। हम एसे उदाहरण पर विचार करें और नम्र बनें।

इस अनुग्रह, सौभाग्य और शान्ति के दिनों में मैं मन ही मन एक भजन गाया करता था। वह सत्याग्रह आश्रम में अक्सर गाया जाता है। वह इतना भाव पूर्ण है कि मैं उसे पाठकों के सामने

उपस्थित करने की सुखाभिलाषा को रोक नहीं सकता। मेरे शब्दों की अपेक्षा उस भजन का भाव ही मेरी स्थिति को अच्छी तरह दर्शित करता है।

रघुबीर! तुमको मेरी लाज।
सदा सदा मैं सरन तिहारी तुम बड़े गरीब निवाज॥
पतित उधारन बिरुद तिहारो श्रवनन सुनी आवाज।
हौं तो पतित पुरातन कहिये पार उतारो जहाज॥
अघ खंडन दुख भंजन जन के यही तिहारो काज।
तुलसीदास पर किरपा करिये भक्ति दान देहु आज॥

(हि न १२-१०-१९२४)

राममाम

काठियावाड़ में एक स्थान पर भाषण में गांधीजी ने रामनाम के सम्बन्ध में नीचे लिखे उद्गार और स्वानुभव प्रकट किये .... ।

अमरुभाई की पहचान आज मुझ से पहले पहल हुई। उन्होंने मुझसे कहा हम लोग पापी हो गये हैं हम कन्याओं को बेचते हैं, अन्त्यजों को अस्पृश्य मानते हैं। इस पाप से हम किस तरह बच सकते हैं? केवल रामनाम से। इसलिए आप जहां जायें वहां सबको रामनाम का मंत्र दें। अमरुभाई रामायण के पीछे पागल हैं। इसलिए मैं समझता हूं उन्होंने यह बात सुझाई है। मैं भी रामायण के पीछे पागल हूं पर मैं तो खादी दीवाना भी हूं और दो दीवानेपन एक साथ नहीं हो सकते। इसलिए मैं तो अपने को खादी दीवाना ही कहता हूं। ये सब जगह रामनाम चाहते हैं। यदि केवल हिन्दू धर्मियों की बात होती तो भी मैं उनकी सूचना पर कुछ अमल कर सकता पर मेरे श्रोताओं में तो ईसाई भी होते हैं पारसी भी होते हैं मुसलमान भी होते हैं। वहां मैं रामनाम किस तरह जपाऊं। हम पापों का प्रायश्चित्त तो तपश्चर्या के द्वारा कर सकते हैं। पाप का

ब्रह्मासन गायत्री के जप से हो सकता है। पर उनके लिये मैं अवकाश नहीं देखता। इस तमाम महाजंजालों से छूटने का रामबाण उपाय तुलसीदासजी ने बताया——रामनाम। अमरभाई भी कहते हैं कि रामनाम का जप कराते जाओ। इसके लिए रुचि होनी चाहिए, बुद्धि चाहिए, योग्यता चाहिए। डरते डरते मैंने मुसलमान भाइयों और कालीपरज के लोगों को यह मंत्र बताया। परंतु उजलीपरज से मैं इसकी बात कैसे करूं? मुसलमान और कालीपरज के लोग तो बेचारे मानते हैं कि हम पतित हैं। सो वे तो मेरा कहना मान सकते हैं। हां मैं उनसे जरूर कहता हूं कि तुमको शराब पीने की इच्छा हो तो राम नाम जपना। पर आप लोगों से किस तरह कहूं? अमरभाई के कहने से आपके सामने इसे पेश करता हूं।

रामनाम के प्रताप से पत्थर तरने लगे रामनाम के बल से बानरसेना ने रावण के छक्के छुड़ा दिये रामनाम के सहारे हनुमान ने पर्वत उठा लिया और रावण के घर अनेक वर्ष रहने पर भी सीता अपने सतीत्व को बचा सकी। भरत ने चौदह साल तक प्राण धारण कर रखा क्योंकि उनके कंठ से रामनाम के सिवा दूसरा कोई शब्द नहीं निकलता था। इसलिए तुलसीदासजी ने कहा कि कलिकाल का मल धो डालने के लिए रामनाम जपो।

इस तरह प्राकृत और संस्कृत दोनों प्रकार से मनुष्य रामनाम लेकर पवित्र होते हैं। परन्तु पावन होने के लिए रामनाम हृदय से लेना चाहिए। जीभ और हृदय को एकरस करके रामनाम लेना चाहिए। मैं अपना अनुभव सुनाता हूं। मैं संसार में यदि व्यभिचारी होने से बचा हूं तो रामनाम की बदौलत। मैंने दावे तो बड़े बड़े किये हैं परन्तु यदि मेरे पास रामनाम न होता तो तीन स्त्रियों को मैं बहन कहने लायक न रहा होता। जब जब मुझ पर विकट प्रसंग

आये हैं मैंने रामनाम लिया है और मैं बच गया हूं। अनेक संकटों से रामनाम ने मेरी रक्षा की है। अपने इक्कीस दिन के उपवास में रामनाम ने ही मुझे शान्ति प्रदान की है और मुझे जिलाया है। इस तरह रामनाम के गीत गाने के लिए यदि कोई मुझ से कहे तो मैं सारी रात गाया करूं। सो यदि आप अपने को दुखी और पतित मानते हों— —और हम सब पतित हैं— —तो सुबह शाम और सोते समय रामनाम का रटन करो और पवित्र होओ।

(हिं न १०-४-१९२१)

रामनाम की महिमा

एक सज्जन पूछते हैं—आपने एक बार काठियावाड़ की यात्रा में किसी जगह कहा था कि मैं जो तीन बहनों से बच गया सो केवल ईश्वर के नाम के भरोसे। इस सिलसिले में "सौराष्ट्र" ने कुछ ऐसी बातें लिखी हैं जो समझ में नहीं आतीं। कुछ इस आशय का लिखा है कि आप मानसिक पापवृत्ति से न बच पाये। इसका अधिक खुलासा करेंगे तो कृपा होगी।

पत्र लेखक से मेरा परिचय नहीं है। जब मैं बम्बई से रवाना हुआ था तब उन्होंने यह पत्र अपने भाई के हाथ मुझे पहुंचाया था। यह उनकी तीव्र जिज्ञासा का सूचक है। ऐसे प्रश्नों की चर्चा सर्व साधारण के सामने आमतौर पर नहीं की जा सकती। यदि सर्व साधारण जन मनुष्य के खानगी जीवन में गहरे पैठने का रिवाज डालें तो स्पष्ट बात है कि उसका फल बुरा आये बिना न रहेगा।

पर इस उचित अथवा अनुचित जिज्ञासा से मैं नहीं बच सकता। मुझे बचने का अधिकार भी नहीं। इच्छा भी नहीं। मेरा खानगी जीवन सार्वजनिक हो गया है। दुनिया में मेरे लिए एक भी ऐसी बात नहीं है जिसे मैं खानगी रख सकूं। मेरे प्रयोग आध्यात्मिक

हूं। कितने ही नये हैं। उन प्रयोगों का आधार आत्मनिरीक्षण पर बहुत निर्भर है। 'यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे" इस सूत्र के अनुसार मैंने प्रयोग किये हैं। इसमें ऐसी धारणा समाविष्ट है कि जो बात मेरे विषय में संभवनीय है, वही औरों के विषय में भी होगी। इस लिये मुझ कितने ही गुह्य प्रश्नों के भी उत्तर देने की जरूरत पड़ जाती है।

फिर पूर्वोक्त प्रश्न का उत्तर देते हुए रामनाम की महिमा बताने का भी अवसर मुझ अनायास मिलता है। उसे मैं कैसे खो सकता हूं। तो अब सुनिये किस तरह मैं तीनों प्रसंगों पर ईश्वर कृपा से बच गया। तीनों प्रसंग वेश्याओं से संबंध रखते हैं। वो कि पास भिन्न २ अवसरों पर मुझे भित्र लोग ले गये थे। पहले अवसर पर मैं झूठी शरम का मारा वहां जा फंसा और यदि ईश्वर ने न बचाया होता तो जरूर मेरा पतन हो जाता। इस मौके पर जिस घर में मैं ले जाया गया था वहां उस स्त्री ने ही मेरा तिरस्कार किया। मैं यह बिलकुल नहीं जानता था कि ऐसे अवसरों पर किस तरह क्या बोलना चाहिए, किस तरह बरतना चाहिए। इसके पहले ऐसी स्त्रियों के पास तक बैठने में मैं लांछन मानता था। इससे इस घर में दाखिल होते समय भी मेरा हृदय कांप रहा था। मकान में जाने के बाद उसके चेहरे की तरफ भी मैं न देख सका। मुझे पता नहीं उसका चेहरा था भी कैसा? ऐसे मूढ़ को वह अपसा क्यों न निकाल बाहर करती? उसने मुझे दो चार बातें सुना कर रवाना कर दिया। उस समय तो मैंने यह न समझा कि ईश्वर ने बचाया। मैं तो खिन्न होकर दबे पांव वहां से लौटा। मैं शरमिंदा हुआ और अपनी मूढ़ता पर मुझे दु ख भी हुआ। मुझे आभास हुआ मानों मुझ में कुछ राम नहीं है। पीछे

मैंने जाना कि मेरी मूढ़ता ही मेरी ढाल थी। ईश्वर ने मुझे बेवकूफ बना कर उबार लिया। नहीं तो मैं जो कि बुरा काम करने के लिए वहां घर में घुसा था कैसे बच सकता था ?

दूसरा प्रसंग इससे भी भयंकर था। यहां मेरी बुद्धि पहले अवसर की तरह निर्दोष न थी हालांकि मैं सावधान ज्यादह था। फिर मेरी पूजनीय माताजी की दिलाई प्रतिज्ञा रूपी ढाल भी मेरे पास थी। पर इस अवसर पर प्रदेश था विलायत। मैं भरजवानी में था। मैं अपने मित्र के साथ एक ही घर में रहता था। थोड़े ही दिन के लिये हम दोनों उस गांव में गये थे। मकान मालकिन आधी वेश्या जैसी थी। उसके साथ हम दोनो ताश खेलने लगे। उन दिनों में समय मिल जाने पर ताश खेला करता था। विलायत में मां बेटे भी निर्दोष भाव से ताश खेल सकते हैं खेलते हैं। उस समय भी हमने ताश का खेल रिवाज के अनुसार अङ्गीकार किया। आरम्भ तो बिल्कुल निर्दोष था। मुझे तो पता भी न था कि मकान मालकिन अपना शरीर बेच कर आजीविका प्राप्त करती थी। पर ज्यों ज्यों खेल जमने लगा त्यों त्यों रंग भी बदलने लगा। उस बाई ने विषयी चेष्टा शुरू की। मैं अपने मित्र को देख रहा था। उन्होंने मर्यादा छोड़ दी थी। मैं ललचाया। मेरा चेहरा तमतमाया। उसमें व्यभिचार का भाव भर गया था। मै अधीर हो रहा था।

पर जिसे राम रक्खे उसे कौन चक्खे? राम उस समय मेरे मुंह में तो न था पर वह मेरे हृदय का स्वामी था। मेरे मुख में तो विषयोत्तेजक भाषा थी। इन सज्जन मित्र ने मेरा रंग ढंग देखा। हम एक दूसरे से अच्छी तरह परिचित थे। उन्हें ऐसे कठिन प्रसंगों की स्मृति थी जब कि मैं अपने ही इरादे से पवित्र रह सका था।

पर इस मित्र ने देखा कि इस समय मेरी बुद्धि बिगड़ गई है। उन्होंने देखा कि यदि इस संगत में रात ज्यादह जायगी तो उसकी तरह मैं भी पतित हुए बिना न रहूँगा।

विषयी मनुष्यों में भी सुवासनायें होती हैं इस बात का परिचय मुझे इस मित्र द्वारा पहले पहल मिला। मेरी दीन दशा देखकर उन्हें दुख हुआ। मैं उनसे उम्र में छोटा था। उनके द्वारा राम ने मेरी सहायता की। उन्होंने प्रेम बाण छोड़े मोनिया! मोनिया होशियार रहना मैं तो गिर चुका हूं तुम जानते ही हो। पर तुम्हें न गिरने दूंगा। अपनी माँ के पास की प्रतिज्ञा को याद करो। यह काम तुम्हारा नहीं। भागो यहां से। जाओ अपने बिछौने पर। हटो हाथ रख लो।

मैंने कुछ जवाब दिया या नहीं यह याद नहीं पड़ता। मैंने हाथ रखा। बड़ा दुख हुआ। लज्जित हुआ। छाती धड़कने लगी। उठ खड़ा हुआ। अपना बिस्तर संभाला।

मैं जगा। रामनाम शुरू हुआ। मन में कहने लगा कौन बचा किसने बचाया धन्य प्रतिज्ञा। धन्य माता धन्य मित्र। धन्य राम। मेरे लिए तो यह चमत्कार ही था। यदि मेरे मित्र ने मुझ पर रामबाण न चलाये होते तो मैं आज कहां होता?

राम बाण वाग्यां रे होय ते जाणे।
प्रेम बाण वाग्यां रे होय ते जाणे॥

मेरे लिए तो यह अवसर ईश्वर साक्षात्कार का था।

अब यदि मुझे सारा संसार कहे कि ईश्वर नहीं राम नहीं तो

---

*यह नाम मेरे दुलार का नाम है। मेरी माता पिता तथा हमारे कुटुम्ब के छोटे बड़े सभी भाई, मुझे इसी नाम से पुकारते थे। इस नाम से पुकारने वालों में पीछे से मित्र मेरे वर्ग वाले शामिल हुए।

मैं उसे झूठा कहूंगा। यदि उस भयंकर रात को मेरा पतन हो गया होता तो आज मैं सत्याग्रह की लड़ाइयां न लड़ा होता। मैं अस्पृश्यता के मैल को न धोता होता। मैं चरखे की पवित्र ध्वनि न उच्चार करता होता आज मैं अपने को करोड़ों स्त्रियों के दर्शन करके पावन होने का अधिकारी न मानता होता। मेरे आस पास जैसे किसी बालक के आस पास ही लाखों स्त्रियां आज निश्शंक होकर न बैठती होतीं। मैं उनसे दूर भागता होता और वे भी मुझसे दूर रहतीं और यह उचित भी था। अपनी जिन्दगी का सबसे अधिक भयंकर समय मैं मैं इस प्रसंग को मानता हूं। स्वच्छन्दता का प्रयोग करते हुए मैंने संयम सीखा। राम को भूल जाते हुए मुझे राम के दर्शन हुए। अहो!

रघुबीर! तुमको मेरी लाज।
हौं तो पतित पुरातन कहिए' पार उतारो जहाज।।

तीसरा प्रसंग हास्यजनक है। एक यात्रा में एक जहाज के कप्तान के साथ तथा एक अंग्रेज यात्री के साथ मेरा मेलजोल हो गया। जहां जहां जहाज ठहरा करता वहां वहां कप्तान और कितने ही यात्री वेश्या घर तलाश करते। कप्तान ने अपने साथ मुझे बन्दर देखने जाने का न्योता दिया। मैं उसका अर्थ नहीं समझता था। हम एक वेश्या के घर के सामने आकर खड़े हो गये। मैंने समझा कि बन्दर देखने जाने का अर्थ क्या है। तीन स्त्रियां हमारे पास खड़ी की गईं। मैं स्तम्भित हो गया। शर्म के मारे न कुछ बोल सका न भाग सका। मुझे विषयेच्छा जरा भी न थी। वे दो तो कमरे में दाखिल हो गये। तीसरी बाई मुझे अपने कमरे में ले गई। मैं विचार कर ही रहा था कि क्या करूं, इतने में दोनों बाहर आए। मैं नहीं कह सकता उस औरत ने मेरे सम्बन्ध में क्या खयाल किया होगा। वह मेरे सामने

हँस रही थी। मेरे दिल पर उसका कुछ असर न हुआ। हम दोनों की भाषा भिन्न थी। सो मेरे बोलने का काम तो वहाँ था ही नहीं। उन मित्रों ने मुझे पुकारा तो मैं बाहर निकल आया। कुछ शरमाया तो जरूर। उन्होंने अब मुझे ऐसी बातों में बेवकूफ समझ लिया। उन्होंने अपने आपस में मेरी दिल्लगी भी उड़ाई। मुझ पर रहम तो जरूर आया। उस दिन से मैं कप्तान के नजदीक दुनिया के बुद्धुओं में शामिल हुआ। फिर उसने अन्दर देखने का न्योता न दिया। यदि मैं अधिक समय वहाँ रहता अथवा उस बाई की भाषा मैं जानता होता तो मैं नहीं कह सकता मेरी क्या हालत होती? पर मैं इतना तो जान सका कि उस दिन भी मैं अपने पुरुषार्थ के बल न बचा था बल्कि ईश्वर ने ही मुझे ऐसी बातों में मूढ़ रख कर बचाया।

इस भाषण के समय मुझे तीन ही प्रसंग याद आये थे। पाठक यह न समझें कि और प्रसंग मुझ पर बीते न थे। मैं तो यह जरूर कहना चाहता हूँ कि हर अवसर पर मैं रामनाम के बल पर बचा हूँ। ईश्वर खाली हाथ वाले वाले निर्बल को ही बल देता है।

> जब लग गजबल आपनो बरत्यो।
> नेक सरयो नहिं काम ॥
> निर्बल होय बलराम पुकार्यो।
> आये आधे नाम ॥

अब यह रामनाम है क्या चीज? क्या तोते की तरह रटना? हरगिज नहीं। यदि ऐसा हो तो हम सबका बेड़ा रामनाम रट कर पार हो जाय। रामनाम उच्चारण तो हृदय से ही होना चाहिए। फिर उसका उच्चारण शुद्ध न हो तो हर्ज नहीं। हृदय की तोतली बोली ईश्वर के दरबार में कुबूल होती है। हृदय भले ही मरा मरा पुकारता रहे फिर भी हृदय से निकली पुकार जमा के खाते में जमा

होगी। पर यदि मुख रामनाम का शुद्ध उच्चारण करता होगा और हृदय का स्वामी होगा रावण तो वह शुद्ध उच्चार भी नामे के सीगे में दर्ज होगा।

मुख में राम बगल में छुरी' वाले बगुला भगत के लिए रामनाम महिमा तुलसीदास ने नहीं गाई। उनके सीधे पासे भी उलटे पड़ेंगे और जिसने हृदय में राम को स्थान दिया है उसके उलटे पासे भी सीधे पड़ेंगे। बिगड़ी का सुधारने वाला राम ही है और इसीसे भक्त सूरदास ने गाया है।

> बिगरी कौन सुधारे ?
> राम बिन बिगरी कौन सुधारे ।।
> बनी बनी के सब कोई साथी।
> बिगरी के नहिं कोई रे ।।

इसलिए पाठक खूब समझलें कि रामनाम हृदय का बोल है। जहां वाणी और मन में एकता नहीं वहां वाणी केवल मिथ्यात्व है, दम्भ है, शब्दजाल है। ऐसे उच्चारण से चाहे संसार भले धोखा खा जाय पर अन्तर्यामी राम कहीं बा सकता है? सीता की दी हुई माला के मनके हनुमान ने फोड़ डाले ------क्योंकि वे देखना चाहते थे कि अन्दर रामनाम है या नहीं? अपने को समझदार समझने वाले सुभटों ने उनसे पूछा ------ --सीताजी की मणिमाला का ऐसा अनादर? हनुमान ने जवाब दिया यदि उसके अन्दर राम-नाम न होगा तो वह सीताजी का दिया होने पर भी यह हार मेरे लिए भाररूप होगा। तब उन समझदार सुभटों ने मुंह बनाकर पूछा-- ---तो क्या तुम्हारे भीतर रामनाम है। हनुमान ने छुरी से तुरन्त अपना हृदय चीर कर दिखाया और कहा-- --देखो अन्दर रामनाम के सिवा अगर और कुछ हो तो कहना। सुभट लज्जित

हुए। हनुमान पर पुष्पवृष्टि हुई और उस दिन से रामकथा के समय हनुमान का आवाहन आरम्भ हुआ। हो सकता है यह कथा काव्य या नाटककार की रचना हो पर उसका सार अनन्तकाल के लिए सच्चा है। जो हृदय में है वही सब है। (हि न २१-५-११२१)

रामनाम

जोश के प्रवाह में प्रतिज्ञा कर लेना बहुत सरल है पर उस पर क़ायम रहना और खासकर प्रलोभनों के बीच महा कठिन है। ऐसी हालत में एक ईश्वर ही मददगार होता है। इसीलिये मैंने सभा को रामनाम सुझाया। राम अल्लाह और खुदा सब मेरे नजदीक एकार्थक शब्द हैं। मैंने देखा कि सीधे सादे भोले लोगों ने धोखे से अपना यह खयाल बना लिया है कि मैं मुसीबत के समय उनको दिखाई देता हूं। मैं इस वहम को दूर कर देना चाहता हूं कि मैं किसी को दर्शन नहीं देता। एक नश्वर शरीर पर भरोसा रखना घमण्ड महज भ्रम है। इसलिए मैंने उनके सामने एक सादा और सरल नुसखा रखा है जो कि कभी बेकार नहीं जाता वह है रोज सूरज निकलने के पहले और शाम को सोने के वक्त अपनी प्रतिज्ञाओं को पूरा करने के लिए ईश्वर की सहायता मांगना। लाखों हिन्दू ईश्वर को राम के नाम से पहचानते है। जब मैं बच्चा था तो जब जब डरता रामनाम लेने को कहा जाता था। मेरे कितने ही साथी ऐसे हैं जिन्हें मुसीबत के वक्त रामनाम से बड़ी तसल्ली मिली है। मैंने धाराला और अछूतों को भी रामनाम बताया। मैं अपने उन पाठकों के सामने भी इसे पेश करता हूं जिनकी दृष्टि धुंधली न हुई हो और जिनकी श्रद्धा बहुत विद्वता प्राप्त करने से मन्द न हो गई हो। विद्वता हमें जीवन की अनेक अवस्थाओं से पार ले जाती है पर संकट और प्रलोभन के समय वह हमारा साथ बिल्कुल नहीं देती। उस हालत में अकेली

श्रद्धा ही उबारती है। रामनाम उन लोगों के लिए नहीं है जो ईश्वर को हर तरह से फुसलाना चाहते हैं और हमेशा अपनी रक्षा की आशा उससे लगाये रहते हैं। यह उन लोगों के लिए है जो ईश्वर से डर कर चलते हैं और जो संयमपूर्वक जीवन बिताना चाहते हैं, पर, अपनी निर्बलता के कारण उसका पालन नहीं कर पाते।

(हि नं० २२ । १९२९)

रामनाम सबसे बड़ा प्रायश्चित

स्वप्न में व्रतभंग हुआ हो तो उसका प्रायश्चित सामान्यतः अधिक सावधानी और जागति आते ही रामनाम है। स्वप्न में होने वाले दोष अपनी अपूर्णता के प्रतीक हैं। बिना जान ही क्यों न हो वे विषय अन्तःकरण के किसी भाग में रहते हैं। उससे निराश होने की आवश्यकता नहीं किन्तु अधिकाधिक प्रयत्नशील होना चाहिये। निराशा विषयासक्ति का चिन्ह हो सकता है अश्रद्धा का तो है ही। रामनाम लेने में जो थक जायगा निराश हो जायगा उसकी श्रद्धा अपूर्ण ही कहनी चाहिये। कोलंबस के साथ रहने वालों की श्रद्धा समाप्त हुई तभी वे उसे मारने के लिए तैयार हुए। कोलंबस को अपनी श्रद्धा की आँखों से किनारा साफ़ दिखाई दे रहा था और उसने थोड़ा समय माँगा और वह अमेरिका पहुँच गया। न खाने योग्य वस्तु यदि स्वप्न में खाई तो उसका भी यही अर्थ है। ऐसे स्वप्नों के बाह्य कारण होते हैं। उन्हें समझकर दूर करना चाहिये। सभी अवस्थाओं का जो साक्षी वह निष्कल ब्रह्म मैं हूँ* ऐसा हम गाते हैं वैसा बनने का सतत प्रयत्न करते हो तभी उसका गाना योग्य है। वैसे हम नहीं हुए हैं, इसके द्योतक ये स्वप्न हैं। हमें ये दीपस्तम्भ की तरह हैं।

---

*जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिमवैति नित्यम् ।
तद् ब्रह्म निष्कलमहं न च भूतसंघः ॥

ईश्वर की कृपा के बिना पत्ता भी नहीं हिलता। किन्तु प्रयत्न रूपी निमित्त के बिना वह हिलता भी नहीं। जीव मात्र की सूक्ष्मतम सेवा ही साक्षात्कार है। (अमृतवाणी पृष्ठ ११०-१११)

रामनाम

रोना और हंसना दिल में से निकलता है। मनुष्य दुःख मानकर रोता है। उसी दुःख को सुख मानकर हंसता है। इसलिये ही राम नाम का सहारा चाहिये। सब उसको अर्पण करदो तो आनन्द ही आनन्द है। (बापू के आशीर्वाद पृष्ठ १६)

जिस के चित्त में तरंगें उठती हो रहती है वह सत्य के दर्शन कैसे कर सकता है! चित्त में तरंग का उठना समुद्र के तूफ़ान जैसा है। तूफ़ान में भी जो मल्लाह नाव चलाने वाला पतवार पर काबू रख सकता है वह सही सलामत रहता है। ऐसे ही चित्त को अशांति में जो रामनाम का आश्रय लेता है, वह जीत जाता है।

(बापू के आशीर्वाद पृष्ठ २१)

विकारी विचार से बचने का एक अमोघ उपाय रामनाम है। नाम कंठ से ही नहीं किन्तु हृदय से निकलना चाहिये।

(बापू के आशीर्वाद पृष्ठ ७६)

व्याधि अनेक हैं। वैद्य अनेक हैं उपचार भी अनेक हैं। अगर व्याधि को एक ही देखें और उसको मिटाने वाला वैद्य एक राम ही है ऐसा समझें तो बहुत सी झंझटों से हम बच जायं।

(बापू के आशीर्वाद पृष्ठ ८१)

आश्चर्य है वैद्य मरते हैं डाक्टर मरते हैं उनके पीछे हम भटकते हैं। लेकिन राम जो मरता नहीं है, हमेशा जिन्दा रहता है और अचूक वैद्य है, उसे हम भूल जाते हैं। (बापू के आशीर्वाद पृष्ठ ८१)

इसी तरह बूढ़े बच्चे जवान धनिक गरीब सबको हम मरते हुए देखते हैं तो भी सन्तोष से बैठना नहीं चाहते हैं लेकिन थोड़े

दिन के जीने के लिये राम को छोड़ सब प्रयत्न करते हैं।

(बापू के आशीर्वाद पृष्ठ ८७)

कैसा अच्छा हो कि इतना समझ कर राम भरोसे रह कर जो व्याधि आवे बरदाश्त करें और अपना जीवन आनन्दमय बना कर व्यतीत करें। (बापू के आशीर्वाद पृष्ठ ८६)

नाम की महिमा सिर्फ़ तुलसीदासजी ने गाई है ऐसा नहीं है बाइबिल में भी मैं वही पाता हूं। बसवें रोमन के १३ कलम में कहते हैं जो कोई ईश्वर का नाम लेंगे व मुक्त हो जायंगे।

(बापू के आशीर्वाद पृष्ठ २ १ ता ८ २-४१)

"निर्बल के बलराम" के जैसा ही साम ३४-१८ में है। जो टूट गया है उसके नजदीक परमात्मा है ही और जिसको सच्चा पश्चाताप हुआ है उसे वह बचा लेता है। *(बापू के आशीर्वाद पृष्ठ २ ७)

मनुष्य जानता है कि जब वह मरने के नजदीक पहुंचता है, तो सिवाय ईश्वर के कोई सहारा नहीं है तो भी रामनाम लेते हिचकिचाहट होती है। ऐसा क्यों ? (बापू के आशीर्वाद पृष्ठ २१७)

कुदरती इलाज (प्राकृतिक उपचार)

कुदरती इलाज या प्राकृतिक उपचार का अर्थ है ऐसे उपचार या इलाज जो मनुष्य के लिए योग्य हों। मनुष्य यानी मनुष्यमात्र। मनुष्य में मनुष्य का शरीर तो है ही लेकिन उसमें मन और आत्मा भी है। इसलिये सच्चा कुदरती इलाज तो रामनाम ही है। इसी

---

*" For whosoever shall call upon the name of the Lord shall be saved" (The New Testament Romans 10-13.)

*The Lord is nigh unto them that are of a broken heart and saveth such as be of a contrite spirit (The old Testament Psalm 34 18)

लिये रामबाण शब्द निकला है। रामनाम ही रामबाण इलाज है। मनुष्य के लिये प्रकृति में उसी को योग्य माना है। कोई भी व्याधि हो अगर मनुष्य हृदय से रामनाम ले तो उसको व्याधि नष्ट होनी चाहिये। रामनाम यानी ईश्वर, अल्लाह गॉड (God) ईश्वर के अनेक नाम हैं, उनमें जो जिसे ठीक लगे उसे वह ले लेकिन उसमें हार्दिक श्रद्धा हो और श्रद्धा के साथ प्रयत्न हो। वह कैसे ?

जिस चीज का मनुष्य पुतला बना है, उसीमें से इलाज ढूंढे। पुतला पृथ्वी पानी आकाश तेज और वायु का बना है। इन पांच तत्त्वों से जो मिल सके सो ले। उसके साथ रामनाम तो अनिवार्य रूप से चलता हो रहे। परिणाम यह होता है कि इतना होते हुए भी शरीर का नाश हो तो होने दे और हर्ष पूर्वक शरीर छोड़ दे। दुनिया में ऐसा कोई उपचार नहीं निकला है जिससे शरीर अमर बन सके। अमर तो आत्मा ही है। उसे कोई मार नहीं सकता। उसके लिए शुद्ध शरीर पैदा करने का प्रयत्न सब करें। इसी प्रयत्न में प्राकृतिक उपचार अपने आप मर्यादित हो जाता है। दुनियां के असंख्य लोग दूसरा कर भी नहीं सकते और जिसे असंख्य नहीं कर सकते उसे थोड़े क्यों करें ?

(ह० से० १-९-४६ ई०)

रामनाम रामबाण

यह देखकर कि कुदरती इलाजों में मैंने रामनाम को रोग मिटाने वाला माना है और इस सम्बन्ध में कुछ लिखा भी है, वैद्यराज श्री गणेशशास्त्री जोशी मुझसे कहते हैं कि इसके संबंध का और इससे मिलता-जुलता साहित्य आयुर्वेद में ठीक-ठीक पाया जाता है। रोग को मिटाने में प्राकृतिक उपचार का अपना बड़ा स्थान है और उसमें रामनाम विशेष है। यह मानना चाहिये कि

जिन दिनों चरक वाग्भट वगैरा ने शास्त्र लिखे थे उन दिनों ईश्वर को रामनाम के रूप में पहिचानने की रूढ़ि पड़ी नहीं थी। उस समय विष्णु के नाम की महिमा थी। मैंने तो बचपन से रामनाम के जरिये ही ईश्वर को भजा है। लेकिन मैं जानता हूँ कि ईश्वर को ॐ के नाम से भजो या संस्कृत प्राकृत से लेकर इस देश की या दूसरे देश की किसी भी भाषा के नाम से उसको जपो परिणाम एक ही होता है। ईश्वर को नाम की आवश्यकता नहीं। वह और उसका नियम दोनों एक ही हैं इसलिए ईश्वरीय नियमों का पालन करना ही ईश्वर का जप है। अतएव केवल तात्त्विक दृष्टि से देखें तो जो ईश्वर की नीति के साथ तदाकार हो गया है उसे जप की जरूरत नहीं। अथवा जिसके लिए जप या नाम का उच्चारण साँस-उसाँस की तरह स्वाभाविक हो गया है वह ईश्वरमय बन चुका है यानी ईश्वर की नीति को सहज ही पहचान लेता है और सहज भाव से उसका पालन करता है। जो इस तरह बरतता है उसके लिए दूसरी दवा की जरूरत ही क्या है?

ऐसा होने पर भी जो दवाओं की दवा है यानी राजा दवा है, उसी को हम कम-से-कम पहचानते हैं जो पहचानते हैं वे उसे भजते नहीं और जो भजते हैं वे केवल वाणी से भजते हैं दिल से नहीं। इस कारण से तोते के स्वभाव की नकल भर करते हैं, अपने स्वभाव का अनुकरण नहीं। इसलिए वे सब ईश्वर को 'सर्वरोगहारी' के रूप में नहीं पहचानते।

पहचानें भी कैसे? यह दवा न तो वैद्य उन्हें देते हैं, न हकीम और न डाक्टर। खुद वैद्यों हकीमों और डाक्टरों को

भी इस पर आस्था नहीं। यदि वे बीमारों को घर बैठे संन्यासी यह दवा दें तो उनका धन्धा कैसे चले? इसलिए उनकी दृष्टि में तो उनकी पुड़िया और शीशी ही रामबाण दवा है। इस दवा से उनका पेट भरता है और रोगी को हाथोंहाथ फल भी देखने को मिलता है। "फलां-फलां ने मुझको चूरन दिया मैं अच्छा हो गया" कुछ लोग ऐसा कहने वाले निकल आते हैं और वैद्य का व्यापार चल पड़ता है।

वैद्यों और डाक्टरों के रामनाम रटने की सलाह देने से रोगी का दुःख दूर नहीं होता। जब वैद्य खुद उसके चमत्कार को जानता हो तभी रोगी को भी उसके चमत्कार का पता चल सकता है। रामनाम पोथी का बैंगन नहीं वह तो अनुभव की प्रसादी है। जिसने उसका अनुभव प्राप्त किया है वही यह दवा दे सकता है दूसरा नहीं।

वैद्यराज ने मुझे चार मंत्र लिख कर दिये हैं। उनमें चरक ऋषि वाला मंत्र सीधा और सरल है। उसका अर्थ यों है—

चराचर के स्वामी विष्णु के हजार नामों में से एक का भी जप करने से सब रोग शांत होते हैं।

विष्णुं सहस्रमूर्धानं चराचर पतिं विभुम्।
स्तुवन्नाम सहस्रेण ज्वरान् सर्वान् व्यपोहति ॥

(ह० से० २४-३-४६) —चरक चिकित्सा, अ० ३-श्लोक ३११

इलाजों का इलाज

प्राकृतिक उपचार के इलाजों में सबसे समर्थ इलाज रामनाम है। इसमें अचम्भे की कोई बात नहीं। एक मशहूर वैद्य ने अभी उस दिन मुझसे कहा था "मैंने अपनी सारी जिन्दगी

मेरे पास आनेवाले बीमारों को तरह-तरह की दवा की पुड़ियें बांटने में बिताई है लेकिन जब आपने शरीर के रोगों को मिटाने के लिए रामनाम को दवा बताई, तब मुझे याद पड़ा कि चरक और वाग्भट जैसे हमारे पुराने धनवन्तरियों के वचनों से भी आप की बात की पुष्टि मिलती है।" आध्यात्मिक रोगों को ... . मिटाने के लिए रामनाम के जप का इलाज बहुत पुराने जमाने से हमारे यहां होता आया है। लेकिन चूंकि बड़ी चीज में छोटी चीज भी समा जाती है इस लिए मेरा यह दावा है कि हमारे शरीर की बीमारियों को दूर करने के लिए भी रामनाम का जप सब इलाजों का इलाज है। प्राकृतिक उपचारक अपने बीमार से यह नहीं कहेगा कि तुम मुझे बुलाओ तो मैं तुम्हारी सारी बीमारी दूर कर दूं। वह तो बीमार को सिर्फ यह बतायगा कि प्राणीमात्र में रहने वाला और सब बीमारियों को मिटाने वाला तत्त्व कौनसा है। किस तरह उस तत्त्व को जाग्रत किया जा सकता है और कैसे उसको अपने जीवन की प्रेरक शक्ति बना कर उसकी मदद से बीमारियों को दूर किया जा सकता है। अगर हिन्दुस्तान इस तत्त्व की ताकत को समझ जाय तो हम आजाद तो हो ही जायें लेकिन उसके अलावा आज हमारा जो देश बीमारियों और कमजोर तबीयत वालों का घर बन बैठा है वह तन्दुरुस्त और ताकतवर शरीर वाले लोगों का देश बन जाय।

रामनाम का उपयोग और उसकी मर्यादा

रामनाम की शक्ति की अपनी कुछ मर्यादा है और उसके कारगर होने के लिए कुछ शर्तों का पूरा होना जरूरी है। राम

नाम कोई जंतर-मंतर या जादू टोना नहीं । जो लोग खा-खा कर खूब मोटे हो गए हैं और जो अपने मुटापे की और उससे साथ बढ़नेवाली बादी की आफ़त से बच जाने के बाद फिर तरह-तरह के पकवानों का मजा चखने के लिए इलाज की तलाश में रहते हैं उनके लिए रामनाम किसी काम का नहीं। रामनाम का उपयोग तो अच्छे काम के लिए होता है । बुरे कामों के लिए हो सकता होता तो चोर और डाकू सबसे बड़े भक्त बन जाते । रामनाम उनके लिए है जो दिल के साफ़ हैं और जो दिल की सफ़ाई करके हमेशा साफ़-पाक रहना चाहते हैं। भोगविलास की शक्ति या सुविधा पाने के लिए रामनाम कभी साधन नहीं बन सकता । बादी का इलाज प्रार्थना नहीं उपवास है । उपवास का काम पूरा होने पर ही प्रार्थना का काम शुरू होता है क्योंकि यह सच है कि प्रार्थना से उपवास का काम आसान और हल्का बन जाता है । इसी तरह एक तरफ से आप अपने शरीर में दवा की बोतलें उंडेला करें और दूसरी तरफ मुंह से रामनाम लिया करें तो वह एक बे मतलब मजाक ही होगा । जो डाक्टर बीमार की बुराइयों को बनाये रखने में या उन्हें सहेजने में अपनी होशियारी का उपयोग करता है वह स्वयं गिरता है और अपने बीमार को भी नीचे गिराता है । अपने शरीर को अपने सिरजनहार की पूजा के लिए मिला हुआ एक साधन समझने के बदले उसी की पूजा करने और उसको किसी भी तरह बनाए रखने के लिए पानी की तरह पैसा बहाने से बढ़कर बुरी बात और क्या हो सकती है ? इसके खिलाफ़ रामनाम रोग को मिटाने के साथ ही साथ आदमी को भी शुद्ध बनाता है और इस तरह

उसको ऊँचा उठाता है। यही रामनाम का उपयोग है और यही उसकी मर्यादा है।

उरुलीकांचन में

पहले ही दिन गांव के बाहर सामूहिक प्रार्थना की गई और दूसरी जगहों की तरह यहां भी सबने एक साथ रामधुन गाने का रिवाज शुरू किया। प्रार्थना में जो भजन गाया गया था उसका आधार लेकर गांधीजी ने वहां आए हुए गांव के लोगों के सामने शरीर की बीमारियों को मिटानेवाली बढ़िया से बढ़िया कुदरती दवा के रूप में रामनाम को पेश किया। "अभी हमने जो भजन गाया उसमें भक्त कहता है, 'हरि! तुम हरो जनकी पीर' यानी हे भगवान् तू अपने भक्तों का दुःख दूर कर। इसमें जिस दुःख की बात कही गई है वह सब तरह के दुःखों से सम्बन्ध रखती है। मन या तन की किसी खास बीमारी की चर्चा इसमें नहीं है।" फिर गांधीजी ने लोगों को कुदरती इलाज की सफलता के नियम बताये। रामनाम के प्रभाव का आधार इस बात पर है कि आपकी उसमें सजीव श्रद्धा है या नहीं। अगर आप गुस्सा करते हैं और सिर्फ शरीर की हिफ़ाज़त के लिए नहीं बल्कि मौज-शौक के लिए खाते और सोते हैं तो समझिये कि आप रामनाम का सच्चा अर्थ नहीं जानते हैं। इस तरह जो रामनाम जपा जायगा उसमें सिर्फ होंट हिलेंगे दिल पर उसका कोई असर न होगा। रामनाम का फल पाने के लिए आपको जपते समय उसमें लीन हो जाना चाहिए और उसका प्रभाव आपके जीवन के तमाम कामों में दिखाई पड़ना चाहिए।

दूसरे दिन सुबह से बीमार आने लगे। कोई १० होंगे गांधीजी ने उनमें से पांच या छः को देखा और उन सब बीमारी के प्रकार को देखकर थोड़े हेर-फेर के साथ सब एक से ही इलाज सुझाए। मसलन रामनाम का जप, सूर्यस्ना बदन को ओर से रगड़ना या घिसना, कटिस्नान, दूध छा फल, फलों का रस और पीने के लिए ठीक-ठीक साफ़ औ ताजा पानी। शाम की प्रार्थना सभा में उन्होंने अपन विच को समझाते हुए कहा। सचमुच यह पाया गया है कि म और शरीर तमाम आधि-व्याधियों का एक ही समान कार है। इसलिए उन सबका एक ही आम इलाज भी हो तो उस अचरज की कोई बात नहीं। रोगों की तरह इलाज भी ए ही ढंग के हो सकते हैं। इसलिए आज सुबह मेरे पास जि बीमार आये थे उन सबको मैंने रामनाम के साथ करीब-करी एक ही सा इलाज सुझाया था। लेकिन अपना रोजमर्रा जीवन में जब शास्त्र हमें अनुकूल नहीं होते तो हम उ वचनों का मनचाहा अर्थ निकाल कर अपना काम चला है। मनुष्य ने इस कला का अच्छा विकास कर लिया हमने अपने मन पर एक ऐसा भ्रम या वहम का सवार लिया है कि शास्त्रों का उपयोग सिर्फ़ इसलिए है कि अ जन्म में जीव का आध्यात्मिक कल्याण हो और धर्म का पा भी इसलिए करना है कि जिसमें मरने के बाद पुण्य की कमाई, काम आ सके। मेरा मत ऐसा नहीं है। अगर जीवन के व्यवहार में धर्म का कोई उपयोग न हो तो अगले जन्म में उससे क्या निस्बत हो सकती है?"

"इस दुनिया में बिरला ही कोई ऐसा होगा जो शरीर और मन को सभी बीमारियों से बिलकुल बरी हो। तन और मन की कुछ बीमारियां तो ऐसी हैं कि जिनका इस दुनिया में कोई इलाज ही नहीं। जैसे शरीर का कोई अंग खण्डित हो गया हो तो उसको फिर से पैदा कर देने का चमत्कार रामनाम में कहां से आवे? लेकिन उसमें इससे भी बड़ा चमत्कार कर दिखाने की ताक़त है। भग्न अंग या बीमारियों के बावजूद सारी जिन्दगी अचूक शांति के[1] साथ बिताने और उमर पूरी होने पर जिस जगह सब को जाना पड़ता है वहां जाने की बारी के आने पर रामनाम मौत के दुःख को और चिता की विजय के डर को मिटा देता है यह क्या कोई छोटा-मोटा चमत्कार है? जब आगे-पीछे मौत आनी ही वाली है तो वह कब आएगी इस फ़िक्र में हम पहले ही से क्यों मरें?"

कुदरती इलाज के मूल तत्व

मनुष्य का भौतिक शरीर पृथ्वी पानी आकाश तेज और वायु नाम के पांच तत्वों से बना है जो पंच महाभूत कहलाते हैं। इनमें का तेज तत्व शरीर को शक्ति पहुंचाता है। आत्मा उसको चैतन्य प्रदान करती है। इन सबमें सबसे जरूरी चीज़ हवा है। आदमी बिना खाये कई हफ्तों तक जी सकता है, पानी के बिना भी वह कुछ घण्टे बिता सकता है लेकिन हवा के बिना तो कुछ ही मिनटों में उसकी देह का अन्त हो सकता है। इसीलिए ईश्वर ने हवा को सबके लिए मुफ़ीद बनाया है।

[1] रामनाम जैसी शान्ति को मंत्रमुग्ध करनेवाली दूसरी कोई शक्ति नहीं है।

अन्न और पानी की तङ्गी कभी कभी पैदा हो सकती है, हवा की कभी नहीं। ऐसा होते हुए भी हम बेवकूफ़ों की तरह अपने घरों के अन्दर खिड़की और दरवाजे बंद करके सोते हैं और ईश्वर की प्रत्यक्ष प्रसादी-सी ताजी और साफ़ हवा से फ़ायदा नहीं उठाते। अगर चोरों का डर लगता है तो रात को अपने घरों के दरवाजे और खिड़कियां बन्द रखिये, लेकिन खुद अपने को उनमें बन्द रखने की क्या जरूरत है?

साफ़ और ताजी हवा पाने के लिए मनुष्य को खुले में सोना चाहिए। लेकिन खुले में सोकर धूल और गंदगी से भरी हवा लेने का कोई मतलब नहीं है। इसलिए आप जिस जगह सोयें वहाँ धूल और गंदगी नहीं होनी चाहिए। धूल और सरदी से बचने के लिए कुछ लोग सिर से पैर तक ओढ़ लेने के आदी होते हैं। यह तो बीमारी से भी बदतर इलाज हुआ। दूसरी बुरी आदत मुँह से सांस लेने की है। नथनों की राह फेफड़ों में पहुँचने वाली हवा छनकर साफ़ हो जाती है और उसे जितना गरम होना चाहिए, उतनी गरम भी वह हो लेती है।

जो आदमी जहाँ चाहे वहाँ जिस तरह चाहे उस तरह थूक कर, कूड़ा करकट डालकर, गन्दगी फैला कर या दूसरे तरीकों से हवा को गन्दी करता है, वह कुदरत का और इन्सानों का गुनहगार है। मनुष्य का शरीर ईश्वर का मंदिर है। उस मंदिर में जाने वाली हवा को जो गन्दी करता है वह मंदिर को भी बिगाड़ता है। उसका रामनाम लेना व्यर्थ है।

(ह० से० ७-४-१९४६)

रामबाण उपाय

आप जो भी कुछ लिखते हैं मैं बड़े चाव से उसका हर एक शब्द पढ़ता हूँ। 'हरिजन' का नया अंक मिलने पर जब तक उसे पूरा न पढ़ लूँ मैं रुक नहीं सकता। नतीजा इसका यह होता है कि मेरे अन्दर एक अजीब खुशी पैदा हो जाती है जो चाहती है कि मैं जिसकी पूजा करूं वह मेरी दृष्टि में पूर्ण हो। कोई भी ऐसी चीज जिस पर विश्वास न जमे मुझे बेचैन कर देती है। हाल ही में आपने लिखा है कि कुदरती उपचार में रामनाम शर्तिया इलाज है। यह पढ़कर तो म बिल्कुल भ्रम में पड़ गया हू! आज के नौजवान अपनी सहनशीलता की वजह से आपकी बहुत सी बातों का विरोध करना पसन्द नहीं करते। वे सोचते हैं 'गांधीजी ने हमको इतनी चीजें सिखलाई हैं, हमें इतना ऊँचा उठाया है जिसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते थे इससे भी बढ़कर उन्होंने हमें स्वराज्य के नजदीक पहुँचा दिया है इसलिए रामनाम की उनकी इस झक को हमें बरदाश्त कर लेना चाहिये!

दूसरी चीजों के साथ आपने कहा है— कोई भी व्याधि हो अगर मनुष्य हृदय से रामनाम ले तो व्याधि नष्ट होना चाहिए! (हरिजन-सेवक, १-१-४६)

"जिस चीज का मनुष्य पुतला बना है उसी में से उसका इलाज ढूंढ़े। पुतला पृथ्वी पानी आकाश तेज और वायु का बना है। इन पाँच तत्त्वों से जो मिल सके सो ले!

(हरिजन-सेवक, १-१-४६)

"और मेरा दावा है कि शारीरिक रोगों को दूर करने के लिए भी रामनाम सबसे बढ़िया इलाज है।

('हरिजन' ७-४-४६)

पहले पहल जब कुदरती उपचार में आपने इस चीज को दाखिल किया तो मुझे समझ कि आप श्रद्धा के आधार पर चलने वाले मानसिक उपचार (Psycho-Therapy) अथवा क्रिश्चियन-साइन्स को ही दूसरे शब्दों में रख रहे हैं। उपचार की हरेक प्रणाली में इसका अपना स्थान होता है। ऊपर के अपने पहले उद्धरण की मैंने इसी अर्थ में व्याख्या की। ऊपर दिये हुए दूसरे वाक्य को समझना कठिन है। आखिरकार इन पंच महाभूतों के बिना जिनका जिक्र करते हुए आप कहते हैं कि सिर्फ वही उपचार के साधन होने चाहिए दवाइयों का बनाना भी तो नामुमकिन है।

"अगर आप श्रद्धा पर जोर देते हैं तो मेरा कोई झगड़ा नहीं है। रोगी के लिए जरूरी है कि वह अच्छा होने के लिये श्रद्धा भी रक्खे लेकिन यह मान लेना मुश्किल है कि सिर्फ श्रद्धा से हमारे शारीरिक रोग भी दूर हो जायेंगे। दो साल पहले मेरी छोटी लड़की को 'इन्फेन्टाइल पैरेलेसिस' (Infantile Paralysis) हो गया था। अगर आज के नये तरीकों से उसका इलाज न किया जाता तो बेचारी हमेशा के लिये पंगु हो जाती। आप मानेंगे कि एक ढाई साल के बच्चे को 'इन्फेन्टाइल पैरेलेसिस' से मुक्त होने के लिये रामनाम का जाप बताकर हम उसकी मदद नहीं कर सकते और न तो एक माता को अपने बच्चे के लिए अकेले एक रामनाम का ही जप करने को आप राजी कर सकते हैं।"

"२४ मार्च के धक्कू में मने भरक का जो प्रमाण दिया है उससे मुझ कोई प्रोत्साहन नहीं मिलता क्योंकि भाप ही ने मझे सिखाया है कि कोई चीज कितनी हो पुरानी या प्रामाणिक क्यों न हो भगर दिल को न जचे, तो उसे नहीं मानना चाहिये ।

नौजवानों के एक अध्यापक इस तरह लिखते हैं । विद्यार्थी संसार का प्रिय बनने के लिए म उत्सुक तो हूँ लेकिन मेरी उत्सुकता की अपनी मर्यादा है । एक बात तो यह है कि मुझे बाकी दुनिया के साथ जो दरअसल बहुत बड़ी है उन्हें भी खुश करना चाहिये । लेकिन एक लोक-सेवक को कभी भी किसी एक व्यक्ति या वर्ग के ऐबों का पोषण करके अपने को गिराना नहीं चाहिये ।

जिन लोगों की तरफ़ से म प्रश्नकर्ता लिख रहे हैं अगर वे सचमुच यह सोचते हैं कि मैंने कोई एसा काम किया है जिसकी वजह से हिन्दुस्तान अनुमान से कहीं ज्यादा ऊँचाई पर पहुँच गया है तो जिसे वे मेरी झक कहते हैं उसे सहन कर लेना ही काफ़ी नहीं बल्कि उससे थोड़ा और बढ़ना चाहिये । सहन कर लेने से ही उनका या मेरा कोई फ़ायदा नहीं होगा । इससे उनमें सुस्ती और मुझ में झूँठा आत्मविश्वास आसानी से बढ़ सकता है । किसी भी 'झक' को नामंजूर करने से पहले उस पर अच्छी तरह उन्हें सोच लेना चाहिए । झक्की आदमी हमेशा घृणा के लायक नहीं होते । अपनी झक के कारण ही एक जमाने में लोगों को फ़ांसी के तख्ते पर चढ़ना पड़ा ।

रामनाम में फ्रेथ-हीलिंग और क्रिश्चियन सायन्स[1] के गुण होते हुए भी वह उनसे बिलकुल अलग है। रामनाम लेना तो उस सचाई का जिसके लिए वह लिया जाता है एक नमूना मात्र है। जिस वक्त कोई आदमी बुद्धिपूर्वक अपने अन्दर ईश्वर का दर्शन करता है उसी वक्त वह अपनी शारीरिक मानसिक और नैतिक सब व्याधियों से छूट जाता है। यह कहकर कि तुम्हें प्रत्यक्ष जीवन में कोई ऐसा आदमी नहीं मिलता तुम इस बयान की सचाई को झूठा नहीं ठहरा सकते। हाँ जिन लोगों को ईश्वर में विश्वास नहीं है उनके लिए बेशक मेरी दलील बेकार है।

क्रिश्चियन साइन्टिस्ट फ्रेथ-हीलर और साइको-थेरेपिस्ट[2] अगर चाहें तो रामनाम में छिपी सचाई की गवाही दे सकते हैं। मैं दलील देकर पाठकों को ज्यादा नहीं बता सकता। जिसने कभी चीनी खाई नहीं उसे कैसे समझायें कि चीनी मीठी होती है? उसे तो चीनी चखने के लिए ही कह सकते हैं।

इस पुण्य नाम का हृदय से जप करने के लिए जो जरूरी शर्तें हैं उन्हें मैं यहां नहीं दोहराऊँगा।

नरक का प्रमाण उन्हीं लोगों के लिए फायदेमन्द है, जो

---

१ क्रिश्चियन सायन्स—श्रद्धा द्वारा की जानेवाली एक चिकित्सा का नाम। ईसा के स्पर्श से मृतप्राय लोग चंगे हो जाते थे। नये करार में इसका जिक्र मिलता है। इसी पर 'फ्रेथ हीलिंग' रचा गया है। खयाल यह है कि श्रद्धा से बीमारी दूर हो सकती है।

२ साइको-थेरैपी (मानसिक चिकित्सा)—मनोविश्लेषण और इच्छा-शक्ति की मदद से कुछ शारीरिक और मानसिक बीमारियों को जड़ से मिटाने का शास्त्र। (ह० से० २८-४-१९४६)

रामनाम में श्रद्धा और विश्वास रखते हैं। दूसरे लोगों को हक है कि वे उस पर विचार करें।

बच्चे ग़ैरज़िम्मेवार होते हैं। रामनाम उनके लिए बेशक नहीं है। वे तो माँ-बाप की दया पर जीने वाले बेबस जीव हैं। इससे हमें पता चलता है कि माँ-बाप की बच्चों के और समाज के प्रति कितनी भारी ज़िम्मेवारी है। मैं उन माँ-बापों को जानता हूँ जिन्होंने अपने बच्चों के रोगों के बारे में लापरवाही की है, और यहाँ तक समझ लिया है कि उनके रामनाम लेने से ही वे अच्छे हो जायंगे।

आख़िर में सब दवाइयाँ पञ्च महाभूतों से बनी हैं यह दलील देना विचारों की अराजकता ज़ाहिर करता है। मैंने सिर्फ़ इसलिए उसकी तरफ़ इशारा किया है कि वह दूर हो जाय।

यक़ीनी इलाज

आत्म-संयम के लिए एक भाई ने तीन तरीके बताये हैं, जिसमें दो बाहरी और एक अन्दरूनी है। अन्दरूनी मदद के बारे में वे यों लिखते हैं।

तीसरी चीज़ जो आत्म-संयम में मदद करती है रामनाम है। इसमें काम-वासना को ईश्वर-दर्शन की पवित्र इच्छा में बदल देने की बहुत ज़बरदस्त ताक़त है। वास्तव में अनुभव से मुझे लगता है कि क़रीब-क़रीब सभी मनुष्यों में जो काम वासना पाई जाती है, वह एक तरह की कुण्डलिनी शक्ति है, जो अपने आप बढ़ती और विकसित होती रहती है। जिस तरह सृष्टि के शुरू से ही मनुष्य प्रकृति के विरुद्ध लड़ता आया है, उसी तरह अपनी कुण्डलिनी की इस स्वाभाविक गति के

विरुद्ध भी उसे लड़ना चाहिए, और उसे नीचे की तरफ़ न जाने देकर ऊपर की ओर ले जाना चाहिये ऊर्ध्वरेता बनाना चाहिए। जहाँ एक बार कुण्डलिनी का ऊपर चलना शुरू हुआ कि वह मस्तिष्क की तरफ़ चलने लगती है और आदमी धीरे-धीरे ऊर्ध्वरेता बनकर खुद अपने आप में और अपने चारों तरफ़ दिखाई देनेवाले आदमियों में एक ही ईश्वर को देखने लगता है।

इसमें कोई शक नहीं कि रामनाम सबसे ज्यादा यक़ीनी इलाज है। अगर दिल से उसका जप किया जाय तो वह हर एक बुरे ख़याल को फ़ौरन दूर कर देता है और जब बुरा ख़याल मिट गया तो उसका बुरा असर होना सम्भव नहीं। अगर मन कमज़ोर है तो बाहर की सब इमदाद बेकार है, और मन पवित्र है तो वह सब अनावश्यक है। इसका यह मतलब हरगिज़ नहीं समझना चाहिये कि पवित्र मनवाला आदमी सब तरह की छूट लेते हुए भी बेदाग बचा रह सकता है। ऐसा आदमी खुद ही अपने साथ कोई छूट न लेगा। उसका सारा जीवन ही उसकी अन्तरकी पवित्रता का सच्चा सबूत होगा। गीता में ठीक ही कहा है कि आदमी का मन ही उसे बनाता और वही उसे बिगाड़ता भी है। मिल्टन जब यह कहता है कि "इन्सान का मन ही सब कुछ है, वही स्वर्ग को नरक और नरक को स्वर्ग बना देता है" तो वह भी इसी विचार की व्याख्या करता है।

आत्म-निरीक्षण

अब मैं दूसरी बात पर आऊँ, जो मैं कहना चाहता हूँ। पिछले बार भी मैंने कहा था। लेकिन सत्य ऐसी चीज है कि चीख-चीख कर कितनी ही बार उसे क्यों न दोहरायें उससे

थकान नहीं होती, जिस तरह अल्लाह या ईश्वर का नाम रटने से नहीं होती। दम्भी आदमी भी मुंह से तो ईश्वर का नाम लेते हैं, मगर बगल में छुरी हो तो वह किस काम का? अगर हृदय से रामनाम लिया जाय, तो कभी थकना मालूम नहीं होता इसलिये मैं जो कुछ आपको कहना चाहता हूं उसे दोहरा-दोहरा कर भी कहूं तो उसमें कोई हर्ज नहीं। उसका असर आप पर होगा। (ह से १९-५ १९४६)

आयुर्वेद और प्राकृतिक चिकित्सा

ईश्वर की स्तुति और सदाचार का प्रचार हर तरह की बीमारी को रोकने का अच्छे-से अच्छा और सस्ते-से-सस्ता इलाज है मुझे इसमें जरा भी शक नहीं। अफ़सोस इस बात का है कि वैद्य हकीम और डाक्टर इस सस्ते इलाज का उपयोग ही नहीं करते। बल्कि हुआ यह है कि उनकी किताबों में इस इलाज को कोई जगह ही नहीं रही और कहीं है तो उसने जन्तर-मन्तर की शकल अख्तियार करके लोगों को वहम के कुए में ढकेला है। ईश्वर की स्तुती या रामनाम का वहम से कोई सम्बन्ध नहीं यह तो कुदरत का सुनहला क़ानून है। जो इस पर अमल करता है वह बीमारी से बचा रहता है। जो अमल नहीं करता वह बीमारियों से घिरा रहता है। तन्दुरुस्त रहने का जो क़ानून है, वही बीमार होने के बाद बीमारी से छुटकारा पाने का भी क़ानून है। सवाल यह होता है कि जो रामनाम जपता है और नेकचलनी से रहता है उसको बीमारी हो ही क्यों? सवाल ठीक हो है। आदमी स्वभाव से ही अपूर्ण है। समझदार आदमी पूर्ण बनने की कोशिश करता है। लेकिन

पूर्ण वह कभी बन नहीं पाता। इसलिए मनमाने ग़लतियां करता है। सदाचार में ईश्वर के बनाये सभी क़ानून समा जाते हैं लेकिन उसके सब क़ानूनों को जानने वाला संपूर्ण पुरुष हमारे पास नहीं। मसलन एक क़ानून यह है कि हद से ज्यादा काम न किया जाय। लेकिन कौन बताये कि यह हद कहां ख़तम होती है ? यह चीज़ तो बीमार पड़ने पर ही मालूम होती है। मिताहार और युक्ताहार यानी कम और ज़रूरत के मुताबिक़ खाना क़ुदरत का दूसरा क़ानून है। कौन बताये कि इसकी हद कब लांघी जाती है ? मैं कैसे जानूं कि मेरे लिए युक्ताहार क्या है ? ऐसी तो कई बातें सोची जा सकती हैं। इन सब का निचोड़ यही है कि हर आदमी को अपना डाक्टर खुद बनकर अपने ऊपर लागू होनेवाला क़ानून का पता लगा लेना चाहिए। जो इसका पता लगा सकता है और उस पर अमल कर सकता है १२५ बरस जीयेगा ही।

श्री वल्लभराम वैद्य पूछते हैं कि मामूली मसाले और पाक वग़ैरा चीज़ क़ुदरती इलाज में गिनी जा सकती हैं या नहीं ? यह एक बड़े काम का सवाल है। डाक्टर दोस्तों का यह दावा है कि वे पूरी तरह क़ुदरती इलाज करने वाले हैं क्योंकि दवाएं जितनी भी हैं सब क़ुदरत ने ही बनाई हैं। डाक्टर तो उनकी नई मिलावटें भर करते हैं। इसमें क्या बुराई है ? इस तरह हर चीज़ पेश की जा सकती है। मैं तो यही कहूंगा कि राम नाम के सिवा जो कुछ भी किया जाता है वह क़ुदरत के खिलाफ़ है। हम मध्यबिन्दु से जितने दूर हटते हैं उतने ही हम असल चीज़ से दूर जा पड़ते हैं। इस तरह सोचते हुए मैं यह कहूंगा कि पांच महाभूतों का असल उपयोग क़ुदरती इलाज

की सीमा है। इससे आगे बढ़ने वाला वैद्य अपने इर्द-गिर्द जो दवायें उगती हों या उगाई जा सकें उनका प्रयोग केवल लोगों के भले के लिए करें पैसे कमाने के लिए नहीं, तो वह भी अपने को कुदरती इलाज करने वाला कह सकता है। ऐसे वैद्य आज कहां हैं ? आज तो वे पैसा कमाने की होड़ाहोड़ी में पड़े हैं। छान-बीन और खोज-ईजाद कोई करता नहीं। उनके आलस और लोभ की वजह से आयुर्वेद आज कंगाल बन गया है, इस बोझ को स्वीकार करने के बदले वैद्य लोग नेताओं को और सरकार को दोष देते हैं। नतीजा यह होता है कि सरकार समझो होने की वजह से और कुछ कर नहीं पाती। दूसरी तरफ वैद्य आलसी और लालची होने के कारण खुद ही अपंग अपाहिज बन जाते हैं और आयुर्वेद बदनाम होता है। (ह से ता १९.१.१९४९)

रामनाम का जादू

रामनाम सिर्फ चन्द खास आदमियों के लिए नहीं है वह सबके लिये है। जो उसका नाम लेता है वह अपने लिये भारी खजाना जमा करता जाता है। और यह तो एक ऐसा खजाना है जो कभी खूटता नहीं जितना इसमें से निकालो उतना बढ़ता ही जाता है। इसका अन्त ही नहीं। और जैसा कि उपनिषद् कहता है:—पूर्ण में से पूर्ण निकालो तो पूर्ण ही बाकी रह जाता है, वैसे ही रामनाम तमाम बीमारियों का एक अक्सीर इलाज है फिर चाहे वे शारीरिक (जिस्मानी) हों मानसिक (दिल व दिमाग की) हों या आध्यात्मिक (रूहानी) हों। रामनाम ईश्वर के कई नामों में से एक है। सच्ची बात तो यह है कि दुनिया में जितने इन्सान हैं उतने ही ईश्वर के नाम हैं। आप राम की जगह

कृष्ण कहें या ईश्वर के अनगिनत नामों में से कोई और नाम लें तो उससे कोई फर्क न पड़ेगा। बचपन में मुझे भूत प्रेत का डर लगा करता था। मेरी धाया ने मुझ से कहा था—अगर तुम रामनाम लोगे तो तमाम भूत प्रेत भाग जायंगे मैं तो बच्चा ही था लेकिन धाया की बात पर मेरी श्रद्धा (यकीन) थी। मैंने उसकी सलाह पर पूरा-पूरा अमल किया। इससे मेरा डर भाग गया। अगर एक बच्चे का यह तजरबा है तो सोचिए कि बड़े आदमियों के बुद्धि और श्रद्धा के साथ रामनाम लेने से उन्हें कितना फ़ायदा हो सकता है?

लेकिन शर्त यह है कि रामनाम दिल से निकले। क्या बुरे विचार आप के मन में आते हैं? क्या काम (शहवत) या लोभ (लालच) आपको सताते हैं? अगर ऐसा है तो रामनाम जैसा कोई जादू नहीं।" और उन्होंने अपना मतलब एक मिसाल देकर समझाया:— फ़र्ज़ कीजिए कि आपके मनमें यह लालच पैदा होता है कि बग़ैर मेहनत किए, बेईमानी के तरीक़े से आप लाखों कमालें। लेकिन अगर आपको रामनाम पर श्रद्धा है तो आप सोचेंगे कि बीबी-बच्चों के लिए आप ऐसी दौलत क्यों इकट्ठा करें जिसे वे शायद उड़ादें? अच्छा चालचलन और अच्छी तालीम व तरबियत के रूप में उनके लिए ऐसी विरासत क्यों न छोड़ जायें जिससे वे ईमानदारी और मेहनत के साथ अपनी रोटी कमा सकें? आप यह सब सोचते तो हैं, लेकिन कर नहीं पाते। अगर रामनाम का निरन्तर जाप चलता रहे तो एक दिन वह आपके कण्ठ से हृदय तक उतर आयेगा और वह रामबाण चीज़ साबित होगा। वह आपके सब भ्रम मिटा देगा आपके झूठे मोह और अज्ञान का छुड़ा देगा। तब आप समझ जायेंगे कि आप कितने

पामर थे जो अपने बाल बच्चों के लिए करोड़ों की इच्छा करते थे बजाय इसके कि उन्हें रामनाम का वह खजाना देते जिसकी कीमत कोई पा नहीं सकता जो हमें भटकने नहीं देता जो मुक्तिदाता है। आप खुशी से फूले नहीं समायेंगे। अपने बाल बच्चों से और अपनी पत्नी से कहेंगे—"मैं करोड़ों कमाने गया था मगर वह कमाना तो भूल गया। दूसरे करोड़ लाया हूं। आपकी पत्नी पूछेगी—कहां है वह करोड़ जरा देखूं तो! जवाब में आपकी आंखें हंसेंगी मुंह हंसेगा आहिस्ता से आप जवाब देंगे:—'जो करोड़ों का पति है उसे हृदय में रख कर लाया हूं। तुम भी चैन से रहोगी, मैं भी चैन से रहूंगा।

(ह० से ११-६-१९४६)

रामनाम और क्षय रोग

प्रश्न—आपके सुझाव के अनुसार रामनाम का सच्चिदानन्द के नाम का—मेरा जप चालू है और उसमें मेरी क्षय की बीमारी में सुधार भी होने लगा है। यह सही है कि साथ में डाक्टरी इलाज भी चल रहा है लेकिन आप कहते हैं कि युक्ताहार और मिताहार से मनुष्य बीमारियों से दूर रह कर अपनी उमर बढ़ा सकता है। मैं तो पिछले २१ वर्ष से मिताहारी रहता आया हूं फिर भी आज ऐसी बीमारी का भोगी बना हुआ हूं। इसे क्या पहले जन्म (पूर्वजन्म) या इस जन्म का दुर्भाग्य कहा जाय? आप यह भी कहते हैं कि मनुष्य १२५ बरस जी सकता है। स्वर्गीय महादेव भाई को आप को बड़ी जरूरत थी यह जानते हुए भी भगवान ने उन्हें उठा लिया। युक्ताहारी और मिताहारी महादेव भाई आपको ईश्वर स्वरूप मानकर जीते थे फिर भी वे खून के दबाव की बीमारी (ब्लडप्रेशर) के शिकार बनकर सदा के लिए चल बसे

भगवान् का अवतार माने जाने वाले रामकृष्ण परमहंस क्षय जैसी कैन्सर की खतरनाक बीमारी के शिकार होकर कैसे मर गये ? वे भी कैन्सर का सामना क्यों न कर सके ?

उत्तर—मैं तो स्वास्थ्य या सेहत की हिफ़ाज़त के जो नियम या क़ानून स्वयं जानता हूँ, वही बताता हूँ। लेकिन मिताहार या युक्ताहार किसे माना जाय यह हर एक आदमी को जानना चाहिये। इस बारे में जिसने बहुतसा साहित्य या ग्रन्थ (शास्त्र) पढ़ा हो और बहुत विचार किया हो वह खुद भी इसे जान सकता है। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि ऐसा ज्ञान या जानकारी शुद्ध और पूरी है। इसीलिए कुछ लोग जिन्दगी को प्रयोगशाला कहते हैं। कई लोगों के तजरबों को इकट्ठा करना चाहिये और उनमें से जानने लायक बात को लेकर आगे बढ़ना चाहिये। लेकिन ऐसा करते हुए अगर सफलता न मिले तो भी किसी का दोष नहीं दिया जा सकता। खुद को भी दोषी नहीं कहा जा सकता। नियम या क़ानून ग़लत हैं, यह कहने की भी एकदम हिम्मत न करनी चाहिये। लेकिन अगर हमारी बुद्धि को कोई क़ानून ग़लत मालूम हो तो सही क़ानून कौन सा है यह जानने की ताक़त अपने में पैदा करके उसका प्रचार करना चाहिये। आपकी क्षय की बीमारी के कई कारण हो सकते हैं। कौन कह सकता है कि पंचमहाभूतों का आपने क़ुदरत के मुताबिक उपयोग किया या नहीं ? इसलिये जहाँ तक मैं क़ुदरत के नियमों को जानता हूँ और उन्हें सही मानता हूँ वहाँ तक मैं तो आपसे यही कहूँगा कि कहीं-न-कहीं पंचमहाभूतों का उपयोग करने में आपने भूल की है। महादेव और रामकृष्ण परमहंस के बारे में आपने जो शंका उठाई, उसका जवाब भी मेरी ऊपर की बात में

था जाता है। क़ुदरत के क़ानून को गलत कहने के बजाय यह कहना ज्यादा युक्तिसंगत (सही) मालूम होता है कि इन्होंने भी कहीं-न-कहीं भूल की होगी। नियम कोई मेरा बनाया हुआ नहीं है यह तो क़ुदरत का नियम है कई अनुभवी लोगों ने इसे कहा है। और इसी बात को मानकर मैं चलने की कोशिश करता हूँ। दरअसल बात यह है कि और कोई अपूर्ण (अधूरा) मनुष्य इसे कैसे जान सकता है? डाक्टर इसे नहीं मानते। मानते भी हैं तो उसका दूसरा अर्थ करते हैं। इसका मुझ पर कोई असर नहीं होता। नियम की ऐसी ताईद करने पर मेरे कहने का यह मतलब नहीं होता और न निकाला जाना चाहिये कि इससे ऊपर के किसी व्यक्ति का महत्व (अहमियत) कम होता है।

(ह से ४-८-१९४६)

कुदरती इलाज और आजकल का इलाज

प्रश्न—क्या आपके कुदरती इलाज में बीमारों के रोगों का निदान करने के लिए आज के नये-से-नये साधनों का इन्तज़ाम रहेगा।

१ नये-से-नये साधन यानी खुर्दबीन एक्सरे वगैरह परीक्षा करने के साधन।

२ जो दवायें आज बीमारियों को दूर करने में ७५ फ़ी सदी कामयाब रही हैं जैसे मौसमी बुखार के लिए कुनैन पेचिश के लिए एमिटिन निमोनिया के लिए पेनिसिलिन।

३ क्या लोगों को निजी सफ़ाई गाँव की सफ़ाई और सेहत की हिफ़ाज़त (आरोग्य रक्षा) के नियम सिखाने का और बीमारियों व इन्द्रियों (मर्जों) की जानकारी देने का इन्तज़ाम होगा?

उत्तर—मेरा कुदरती इलाज तो सिर्फ़ गाँववालों के और गाँवों के लिए ही है। इसलिए उसमें खुर्दबीन, एक्सरे वगैरा को कोई जगह नहीं और न ही कुदरती इलाज में कुनैन एमिटिन पेनिसिलिन जैसी दवाओं की गुन्जाइश है। उसमें अपनी सफ़ाई, घर की सफ़ाई, गाँव की सफ़ाई और तन्दुरुस्ती की हिफ़ाजत का पहला स्थान है और पूरा-पूरा है। इसकी तह में ख़याल यह है कि अगर इतना किया जा सके तो सके तो कोई बीमारी ही न हो। और बीमारी आ जाय तो उसे मिटाने के लिए कुदरत के सभी क़ानूनों पर अमल करने के साथ-साथ रामनाम ही असल इलाज है। यह इलाज सार्वजनिक या आम नहीं हो सकता। जब तक खुद इलाज करने वालों में रामनाम की सिद्धि न आ जाय तब तक रामनाम रूपी इलाज एकदम आम नहीं बनाया जा सकता। लेकिन पंचमहाभूतों यानी पृथ्वी पानी आकाश तेज और हवा में से जितनी शक्ति ली जा सके उतनी लेकर रोग मिटाने की यह एक कोशिश है, और मेरे ख़याल में कुदरती इलाज यहीं ख़त्म हो जाता है। इसलिए आजकल उरुलीकांचन में जो प्रयोग चल रहा है, वह गाँववालों की तन्दुरुस्ती की हिफ़ाज़त करने की कला सिखाने और बीमारों को बीमारी को पंचमहाभूतों की मदद से मिटाने का प्रयोग है। ज़रूरत मालूम होने पर उसी में मिलने वाली जड़ी-बूटियों का इस्तेमाल किया जा सकता है और पथ्य-परहेज़ तो कुदरती इलाज का ज़रूरी हिस्सा है ही। (ह से १८-८-४६)

रामनाम का तिलस्म

जिन्होंने रामनाम का तिलस्म ढूंढ पाया, वे सावधान तो हैं हीं पर उन्होंने अनुभव किया कि सत्य और अहिंसा पर अमल

करने के लिये जितनी दवाइयाँ हैं उनमें से सबसे अच्छी दवाई रामनाम है। (ह० से० १९-१-१९४६)

पाँच प्रकार के वैद्य

"जन्द अवस्ता (पारसी लोगों का धर्म-ग्रंथ) का जो हिस्सा आज इन बहनों ने गाकर सुनाया, उसमें ५ किस्म के वैद्य या हकीम का जिक्र है। पाँचवाँ और सच्चा वैद्य वह कहा गया है, जो रोग को मिटाने में ईश्वर के नाम का ही भरोसा रखता है। मैं तो यह चीज कहता ही रहा हूँ। कुदरती इलाज में एक ही रामबाण दवा है और वह है रामनाम। मुझे यह जानकर बहुत खुशी हुई और ताज्जुब भी हुआ कि गाथा में भी यही बात कही गई है।" (ह० से० २८-७-१९४६)

क्या रामनाम और जंतर-मंतर एक हैं?

प्रश्न—मेरा भतीजा बीमार था। उसके लिए रिश्तेदारों ने दवा-दारू नहीं की। ओझों और पण्डों को बुलाया और जंतर मंतर करवाये। यह नहीं कहा जा सकता कि उससे उसे कुछ फायदा हुआ। शायद आपकी माता ने भी आपके लिए ऐसा ही किया होगा। अब आप रामनाम की बात करते हैं। जंतर-मंतर और रामनाम एक तो नहीं है न?

उत्तर—इस शंका का जवाब किसी-न-किसी शकल में मैंने दिया तो है फिर भी कुछ और कहना अच्छा होगा। मुझे ख्याल है कि मेरी माँ ने दवाई तो कराई थी। पर वह जंतर-मंतर में विश्वास अवश्य रखती थी। मेरे कुछ ज्ञानी मित्र हैं जो जंतर मंतर में विश्वास रखते हैं। मगर मेरी आस्था जंतर-मंतर में नहीं जमती। इसलिए मैं निडर होकर कह सकता हूँ कि मेरे

रामनाम का जंतर-मंतर से कोई वास्ता नहीं है। मैंने कहा है कि रामनाम अथवा किसी भी रूप में हृदय से ईश्वर का नाम लेना एक महान् शक्ति का सहारा लेना है। वह शक्ति जो कर सकती है वैसी दूसरी कोई शक्ति नहीं कर पाती। उसके मुकाबले अणुबम कोई चीज नहीं। इससे सब दर्द दूर होते हैं। हाँ यह सही है कि हृदय से नाम लेने की बात कहना आसान है करना कठिन है। सो वह कितनी भी कठिन क्यों न हो वही सर्वोपरि वस्तु है। (ह से १९-१ १९४६)

सब रोगों का इलाज

गाँधीजी ने कहा—

अगर आप अपने दिल से डर को दूर करदें तो मैं यही कहूँगा कि आपने मेरी बहुत मदद की। लेकिन वह कौनसी जादू की चीज है जो आपके इस डर को भगा सकती है? वह है रामनाम का अमोघ मंत्र। शायद आप कहेंगे कि रामनाम में आपको विश्वास नहीं। आप उसे नहीं जानते लेकिन उसके बगैर आप एक साँस भी नहीं ले सकते उसे आप चाहे ईश्वर कहिये अल्लाह कहिये गॉड कहिये या अहुरमज्द कहिये। दुनिया में जितने मानव हैं, उतने ही उसके अनगिनत नाम हैं। विश्व में उसके जैसा दूसरा कोई नहीं। वही एक महान् है। विभु है। दुनिया में उससे बड़ा और कोई नहीं। वह अनादि अनन्त निरंजन और निराकार है। मेरा राम ऐसा है। एक वही मेरा स्वामी और मालिक है।

गांधीजी ने रुंधे हुए कंठ से इस बात का जिक्र किया कि बचपन में वह बहुत डरपोक थे और परछाईं से भी डरा करते थे। उनकी दाई रम्भा ने उन्हें डर भगाने के लिए रामनाम का

मन्त्र सिखाया था। गांधीजी ने कहा—"रम्भा मुझसे कहती कि जब डर मालूम हो राम का नाम लिया करो। वह तुम्हारी रक्षा करेगा। उस दिन से रामनाम सब तरह के डरों के लिए मेरा अचूक सहारा बन गया है।

राम पवित्र लोगों के दिलों में हमेशा रहता है। जिस तरह बंगाल में श्री चैतन्य और श्री रामकृष्ण का नाम मशहूर है उसी तरह काश्मीर से कन्याकुमारी तक हर एक हिन्दू घर जिनके नाम से परिचित है उन भक्तशिरोमणि तुलसीदास ने अपने अमर महाकाव्य रामायण में हमको रामनाम का मंत्र दिया है। अगर आप रामनाम से डर कर चले तो दुनिया में आपको क्या राजा क्या रंक किसी से डरने की जरूरत नहीं रह जायगी। 'अल्लाहो अकबर' की पुकारों से आपको क्यों डरना चाहिये? इस्लाम का अल्लाह तो बेगुनाहों की हिफ़ाज़त करने वाला है। पूर्वी बंगाल में जो वारदातें हुई हैं पैग़म्बर साहब का इस्लाम उन्हें मन्जूर नहीं करता।

अगर ईश्वर में आपकी श्रद्धा है तो किसकी ताक़त है कि आपकी औरतों और लड़कियों की इज्जत पर हाथ डाले? इसलिये मुझे आशा है आप लोग मुसलमान से डरना छोड़ देंगे। अगर आप रामनाम में विश्वास करते हैं तो आपको पूर्वी बंगाल छोड़ने की बात नहीं सोचनी चाहिये। जहाँ आप पैदा हुए और पले-पुसे वहीं आपको रहना चाहिये और जरूरत पड़ने पर बहादुर मर्दों और औरतों की तरह अपनी आबरू की हिफ़ाज़त करते हुए वहीं मर जाना चाहिये। संकट का सामना करने के बदले उससे दूर भागना श्रद्धा से इन्कार करना है जो मनुष्य पर, ईश्वर पर और अपने आप पर रहती है। अपनी श्रद्धा का ऐसा

दिवाला निकालने से बेहतर तो यह है कि इन्सान डूब कर मर जाय। (ह से दा २४ ११ १९४९)

सच्चा डाक्टर राम ही है

नोआखाली में श्रामकी नाम का एक गाँव है। वहाँ बापूजी के लिए बकरी का दूध कहीं न मिल सका। सब तरह तलाश करते करते जब मैं थक गई तब ग्राखिर मैंने बापू को यह बात बताई। बापूजी कहने लगे—'तो इसमें क्या हुआ? नारियल का पानी बकरी के दूध की जगह अच्छी तरह काम दे सकता है। और बकरी के घी के बजाय हम नारियल का ताजा तेल निकाल कर खायेंगे।

इसके बाद नारियल का दूध और तेल निकालने का तरीका बापू ने मुझे बताया। मैंने निकाल कर उन्हें दिया। बापूजी बकरी का दूध हमेशा आठ औंस लेते थे, उसी तरह नारियल का दूध भी आठ औंस लिया। लेकिन हजम करने में बहुत भारी पड़ा और उससे उन्हें दस्त होने लगे। इससे शाम तक इतनी कमजोरी आ गई कि बाहर से झोंपड़ी में आते-आते बापू को चक्कर आ गये।

जब-जब बापू को चक्कर आने वाले होते तब-तब उसके चिन्ह पहले ही दिखाई देने लगते थे। उन्हें बहुत ज्यादा उबासियाँ आतीं पसीना आता और कभी-कभी वे आँखें भी फेर लेते थे। इस तरह उनके उबासियाँ लेने से चक्कर आने की सूचना तो मुझे पहले ही मिल चुकी थी। मगर मैं सोच रही थी कि अब बिछौना चार ही फुट तो दूर है वहाँ तक तो बापूजी पहुँच ही जायेंगे। लेकिन मेरा अन्दाज गलत निकला और मेरे सहारे चलते-चलते ही बापूजी लड़खड़ाने लगे। मैंने सावधानी से उनका सिर संभाल रखा था और निर्मल बाबू को जोर से पुकारा। वे आये और

हम दोनों ने मिलकर उन्हें बिछौने पर सुला दिया। फिर मैंने सोचा कहीं बापू ज्यादा बीमार हो गये तो लोग मुझ मूर्ख कहेंगे। पास के देहात में ही सुशीला बहन है उन्हें न बुलवा लूं ? मैंने चिट्ठी लिखी और उसे भिजवाने के लिए निर्मल बाबू के हाथ में दी ही थी कि इतने में बापू को होश आया और मुझे पुकारा 'मनुड़ी ! (बापूजी जब लाड़ से बुलाते थे तो मुझे 'मनुड़ी' कहते थे)। मै पास गई तो कहने लगे—तुमने निर्मल बाबू को आवाज लगाकर बुलाया यह मुझ बिलकुल नहीं रुचा। तुम अभी बच्ची हो इसलिए मैं तुम्हें इसके लिए माफ़ तो कर सकता हूँ। परन्तु तुम से मेरी उम्मीद तो यही है कि तुम और कुछ न करके सिर्फ़ सच्चे दिल से रामनाम लेती रहो। मै अपने मन में तो रामनाम ले ही रहा था। पर तुम भी निर्मल बाबू को बुलाने के बजाय रामनाम शुरू कर देतीं तो मुझे बहुत अच्छा लगता। अब देखो यह बात सुशीला से न कहना और न उसे चिट्ठी लिखकर बुलाना। क्योंकि मेरा सच्चा डाक्टर तो मेरा राम ही है। जहाँ तक उसे मुझसे काम लेना होगा वहाँ तक मुझे जिलायेगा और नहीं तो उठा लेगा।

'सुशीला को न बुलाना' यह सुनते ही मैं कांप उठी और मेने तुरन्त निर्मल बाबू के हाथ से चिट्ठी छीन ली। चिट्ठी फट गई। बापू ने पूछा—क्यों तुमने चिट्ठी लिख भी डाली थी न ?" मैंने लाचारी से मंजूर किया। तब कहने लगे—आज तुम्हें और मुझे ईश्वर ने बचा लिया। यह चिट्ठी पढ़कर सुशीला अपना काम छोड़कर मेरे पास दौड़ी आती वह मुझे बिलकुल पसन्द न आता। मुझे तुमसे और अपने आपसे चिढ़ होती। आज मेरी कसौटी हुई। अगर रामनाम का मन्त्र मेरे दिल में पूरा-पूरा रम

जानता तो मैं कभी बीमार होकर नहीं मरूँगा । यह नियम सिर्फ मेरे लिए ही नहीं सबके लिए है । हर एक आदमी को अपनी भूल का नतीजा भोगना ही पड़ता है । मुझे जो दुःख भोगना पड़ा वह मेरी किसी भूल का ही परिणाम होगा । फिर भी आखरी दम तक रामनाम का ही स्मरण होना चाहिये । वह भी तोते की तरह नहीं बल्कि सच्चे दिल से लिया जाना चाहिये । जैसे रामायण में एक कथा है कि हनुमानजी को जब सीताजी ने मोती की माला दी तो उन्होंने उसे तोड़ डाला । क्योंकि उन्हें देखना था कि उसमें राम का नाम है या नहीं । यह बात सच है या नहीं उसकी फ़िकर हम क्यों करें ? हमें तो इतना ही सीखना है कि हनुमानजी जैसा पहाड़ी शरीर हम अपना न भी बना सकें फिर भी उनके जैसी आत्मा तो जरूर बना सकते हैं । इस उदाहरण को यदि आदमी चाहे तो सिद्ध कर सकता है । हो सकता है वह सिद्ध भी न कर पाये । लेकिन यदि सिद्ध करने की कोशिश ही करे, तो भी काफ़ी है । गीता माता ने कहा ही है कि मनुष्य को कोशिश करनी ही चाहिये और फल ईश्वर के हाथ में छोड़ देना चाहिये । इसलिए तुम्हें मुझे और सबको कोशिश तो करनी ही चाहिये । अब तुम समझीं कि मेरी तुम्हारी या किसी की बीमारी में मेरी क्या धारणा है ?

उसी दिन एक बीमार बहन को पत्र लिखते हुए भी बापू ने यही बात लिखी—'संसार में अगर कोई अचूक दवाई है, तो वह रामनाम है । इस नाम के रटने वालों को इसका अधिकार प्राप्त करने के सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न नियमों का पालन करना चाहिये उन सबका वे पालन करें । मगर यह रामबाण इलाज करने की हम सबमें योग्यता कहाँ है ?

(मनु बहन की रोज की नोंधवाली की डायरी से)

ऊपर की घटना ३० जनवरी, १९४७ के दिन घटी थी। बापू की मृत्यु से ठीक एक साल पहले।

इस रामनाम पद की उनकी यह श्रद्धा आखरी क्षण तक प्रबल रही। १९४७ की ३० वीं जनवरी को यह घटना घटी और १९४८ को ३० वीं जनवरी को बापू ने मुझसे कहा कि 'आखरी दम तक हमें रामनाम रटते रहना चाहिये। इस तरह आखिरी वक्त भी दो बार बापू के मुँह से 'रा म! रा म! सुनना मेरे ही भाग में बदा होगा इसकी मुझ क्या कल्पना थी! ईश्वर की गति कैसी गहन है। ('बापू मेरी माँ' पुस्तक से)

ग्राम लोगों के लिये इलाज

आपको यह जानकर खुशी होगी कि ४० बरस से भी पहले जब मैंने कुहने की न्यू साइन्स आफ हीलिंग' और जस्ट की रिटर्न टु नेचर' नाम की किताबें पढ़ीं तभी से मैं कुदरती इलाज का पक्का हिमायती हो गया था। लेकिन मुझे यह कबूल करना चाहिये कि 'रिटर्न टू नेचर' का पूरा-पूरा मतलब नहीं समझ सका हूँ—इसकी वजह मेरी इच्छा की कमी नहीं बल्कि मेरे ज्ञान की कमी है। अब मैं कुदरती इलाज का ऐसा तरीका खोजने की कोशिश कर रहा हूँ जो हिन्दुस्तान के करोड़ों गरीबों को फ़ायदा पहुँचा सके। मै सिर्फ़ ऐसे ही इलाज के प्रचार की कोशिश करता हूँ जो मिट्टी पानी धूप हवा और आकाश के इस्तेमाल से किया जा सके। इस इलाज से मनुष्य को कुदरतन यह बात समझ में आ जाती है कि दिल से भगवान् का नाम लेना ही सारी बीमारियों का सबसे बड़ा इलाज है। इस भगवान् को हिन्दुस्तान के कुछ करोड़ मनुष्य राम के नामसे जानते हैं और

दूसरे कुछ करोड़ अल्लाह के नाम से पहचानते हैं। दिल से भगवान् का नाम लेनेवाले मनुष्य का यह फ़र्ज़ हो जाता है कि वह कुदरत के उन नियमों को समझे और उनका पालन करे, जो उसने मनुष्य के लिए बना दिये हैं। यह दलील हमें इस नतीजे पर पहुँचाती है कि बीमारी का इलाज करने से उसे रोकना बहतर है। इसलिए मैं लाज़िमी तौर पर लोगों को सफ़ाई के नियम समझाता हूँ यानी उन्हें मन शरीर और इसके आसपास के वातावरण की सफ़ाई का उपदेश करता हूँ। (ह० से० १२-१-४७)

राम ही सबसे बड़ा वैद्य है

आज मेरा एकमात्र वैद्य मेरा राम है। जैसा कि प्रार्थना में गाये गये भजनों में कहा गया है, राम तमाम शारीरिक मानसिक और नैतिक बुराइयों को दूर करनेवाला है। कुदरती इलाज के डाक्टर दीनशा महता से चर्चा करते हुए यह सत्य पूरी तौर पर मेरे सामने स्पष्ट हो गया है। मेरी राय में कुदरती इलाज में रामनाम का स्थान पहला है। जिसके दिल में रामनाम है उसे और किसी दवाई की जरूरत नहीं है। राम के उपासक को मिट्टी और पानी के इलाज की भी जरूरत नहीं है। यही सलाह मैं दूसरे जरूरतमन्द लोगों को भी देता रहा हूँ। अब दूसरा कोई रास्ता अख्तियार करना मुझे शोभा नहीं देता।

यहाँ बड़े-बड़े हकीम वैद्य और डाक्टर हैं जिन्होंने सेवा के खातिर ही इन्सानों की सेवा की है। डा० जोशी दिल्ली के एक मशहूर सर्जन थे जो धनी और ग़रीब हिन्दू-मुसलमानों की एकसी सेवा करते थे। वे ग़रीबों का मुफ़्त इलाज करते थे उन्हें खाना देते थे और घर लौटने का खर्च भी देते थे। लेकिन डाक्टरी का इतना बड़ा ज्ञान पाने के बाद भी वे भगवान के सिवा किसी का सहारा नहीं चाहते थे। (ह० से० २-१०-४७)

रामनाम सबसे बड़ा है

जब मैं आगाखान महल में जिसे मुझे, देवी सरोजनी नायडू मीराबेन और महादेवभाई को बन्द रखने के लिये कैदखाना का रूप दे दिया गया था उपवास कर रहा था, तब एक भजन ने मुझ पर अधिकार कर लिया था। उस भजन की पंक्तियां मेरे हृदय में गूंजती रहती थीं। मैं उसकी धुन में मस्त रहता था।

उपवास के बारे में मैं केवल इतना ही कहना चाहता हूँ कि उन २१ दिनों तक मैं जो टिका रहा उसकी वजह वह पानी नहीं था जो मैं पीता था न वह सन्तरे का रस ही था जो कुछ दिनों तक मैंने लिया था। जो मेरी गैरमामूली डाक्टरी देखरेख हो रही थी वह भी उसका कारण नहीं थी। मगर मैंने अपने भगवान को जिसे मैं राम कहता हूँ अपने दिल में बना रखा था उसी वजह से मैं टिका रहा। मैं इस भजन की लकीरों पर इतना मोहित था कि मैंने सम्बन्धित लोगों से कहा कि वे तार के जरिये इसके ठीक शब्द भजें जिन्हें मैं उस वक्त भूल गया था। मुझे जवाबी तार से जब वह पूरा भजन मिला तो बड़ी खुशी हुई। भजन का भाव यह है कि रामनाम ही सब कुछ है और उसके सामने दूसरे देवताओं का कोई महत्त्व नहीं है। अपने जीवन की यह उपदेश भरी कहानी मैं आप लोगों को इसलिए सुनाना चाहता हूँ कि अगले दिन यानी शनिवार को नई दिल्ली में ए० आई० सी० सी० का जो महत्त्वपूर्ण अधिवेशन होने वाला है, उसमें उसके मेम्बर अपने दिलों में भगवान को रखकर सारे विचार और सारी चर्चायें करें। यह उन्हें करना ही होगा क्योंकि वे कांग्रेसियों के नुमाइन्दे हैं और इसलिये अगर उनके मुखिया कांग्रेसी अपने दिलों में भगवान के बजाय शैतान को रखते हैं तो वे अपने नमक के प्रति इन्साफ नहीं करते। (ह० से० २१-११४८)

सच्ची रोशनी

मुझे अफ़सोस है कि आज हिन्दुस्तान रामराज्य नहीं है। इसलिए हम दीपावली कैसे मना सकते हैं। वही आदमी इस विजय की खुशी मना सकता है जिसके दिल में राम है। क्योंकि भगवान ही हमारी आत्मा को रोशनी दे सकता है और ऐसी ही रोशनी सच्ची रोशनी है। आज जो भजन गाया गया उसमें कवि की भगवान को देखने की इच्छा पर जोर दिया गया है। लोगों की भीड़ *दिखावटी रोशनी देखने जाती है* लेकिन आज हमें जिस रोशनी की ज़रूरत है, वह तो प्रेम की रोशनी पैदा होनी चाहिए। आज हजारों-लाखों लोग भयानक दुःख भोग रहे हैं। क्या आप लोगों में से हर एक अपने दिल पर हाथ रख कर यह कह सकता है कि हर दुःखी आदमी या औरत फिर चाहे वह हिन्दू, सिक्ख या मुसलमान कोई भी हो—मेरा सगा भाई या बहन है? यही आपकी कसौटी है। राम और रावण भलाई और बुराई की ताक़तों के बीच हमेशा चलने वाली लड़ाई के प्रतीक हैं। सच्ची रोशनी भीतर से पैदा होती है। (ह० से० १२-११ १९४७)

रामनाम और हृदय की पवित्रता

...रामनाम सिर्फ़ कल्पना की चीज नहीं उसे तो दिल से निकलना है। परमात्मा में ज्ञान के साथ विश्वास हो और तभी किसी दूसरी मदद के बिना रोगी बिलकुल अच्छा हो सकता है। उसूल यह है कि शरीर की सेहत तभी बिलकुल अच्छी हो सकती है जब मन की सेहत पूरी-पूरी ठीक हो और मन पूरा-पूरा तभी ठीक होता है जब दिल पूरा-पूरा ठीक हो। यह वह दिल नहीं जिसे डाक्टर स्टेथेस्कोपों से देखते हैं, बल्कि वह दिल है, जो ईश्वर का घर है। कहा जाता है कि अगर कोई अपने अन्दर परमात्मा

को पहचान ले, तो एक भी गन्दा या फ़िजूल का ख़याल मन में नहीं आ सकता। जहाँ विचार शुद्ध हो वहाँ बीमारी आ ही नहीं सकती। ऐसी हालत को पहुँचना शायद कठिन हो पर इस बात को समझ लेना स्वास्थ्य की पहली सीढ़ी है। दूसरी सीढ़ी है समझने के साथ-साथ कोशिश भी करना। जब किसी के जीवन में यह बुनियादी तबदीली आती है, तो उसके लिये स्वाभाविक हो जाता है कि वह उसके साथ-साथ कुदरत के उन तमाम क़ानूनों का पालन भी करे, जो आज तक मनुष्यों ने ढूँढ़ निकाले हैं। जब तक उनमें बेपरवाही की जायगी तब तक कोई यह नहीं कह सकता कि उसका हृदय पवित्र है। यह कहना ग़लत न होगा कि अगर किसी का हृदय पवित्र है तो उसकी सेहत रामनाम न लेते हुए भी उतनी ही अच्छी रह सकती है। असल बात यह है कि सिवा रामनाम के पवित्रता पाने का और कोई दूसरा तरीका मुझे मालूम नहीं है। दुनियाँ में पुराने ऋषि भी इसी रास्ते पर चले हैं और वे भी तो खुदा के बंदे थे कोई वहमी या ढोंगी आदमी नहीं थे।

एक भाई पूछते हैं कि क्या रामनाम में जर्राही (शस्त्र क्रिया) इलाज की इजाज़त नहीं है? क्यों नहीं? एक टाँग अगर किसी दुर्घटना से कट गई है तो रामनाम उसे वापस थोड़े ही जोड़ सकता है। लेकिन बहुत सी हालतों में ऑपरेशन ज़रूरी नहीं होता मगर जहाँ ज़रूरी हो वहाँ करवा लेना चाहिये। सिर्फ़ इतनी बात है कि अगर खुदा के किसी बन्दे का हाथ पाँव जाता रहा तो वह इसकी चिन्ता नहीं करेगा।

---

३ साक्षात्कार के साधन

'जो गरीबों की सेवा करता है उसके हृदय में ईश्वर अपने आप अपनी गरज से रहता है।

'गरीबों की सेवा ही ईश्वर की सेवा है।

'श्रद्धापूर्वक रामनाम का उच्चारण करने से एकाग्रचित्त हो सकते हैं।

करोड़ों के हृदय का अनुसन्धान करने और उनमें ऐक्य भाव पैदा करने के लिये एक साथ रामनाम की धुन जैसा दूसरा कोई सुन्दर और सरल साधन नहीं।

'रामनाम का चमत्कार सबको प्रतीत नहीं होता क्योंकि वह हृदय से निकलना चाहिए कंठ से तो तोता भी निकालता है।

'भगवान न मन्दिर में है न मस्जिद में न भीतर न बाहर कहीं है तो दीन जनों की भूख और प्यास में है। चलो, हम उनकी भूख और प्यास मिटाने के लिये नित्य कातें या एसी बात मेहनत उनके निमित्त रामनाम लेकर करें।

मैं बिना किसी हिचकिचाहट के यह कह सकता हूँ कि लाखों आदमियों द्वारा सच्चे दिल से एक ताल और लय के साथ गाया जाने वाली रामधुन की ताकत फौजी ताकत के दिखावे से बिल्कुल अलग और कई गुना बड़ी चढ़ी है।

लेकिन अगर ईश्वर का नाम जपने वाले लोग शराब पीते हैं व्यभिचार करते हैं बाजारों में सट्टा खेलते हैं जुआ खेलते और काला बाजार (चोर बाजारी) करते हैं तो उनका रामनाम जपना बेकार है।

ब्रह्मचर्य

ब्रह्मचर्य का अर्थ है मन, वचन और काया से समस्त इन्द्रियों संयम। ब्रह्मचर्य अल्प प्रयत्न से साध्य नहीं होता। प्रयत्नशील चारी तो नित्य अपनी त्रुटियों को देखेगा अपने हृदय के ने-कुचरे में छिपे विकारों को पहचान लेगा और उन्हें बाहर कालने का निरन्तर उद्योग करेगा। जब तक अपने विचारों पर गा काबू न हो जाय कि अपनी इच्छा के बिना एक भी विचार में न आने पावे तब तक वह सम्पूर्ण ब्रह्मचर्य नहीं। जितने विचार हैं वे सब एक तरह के विकार हैं। उनको वश में ने का अर्थ है मन को वश में करना। और मन को वश में ना वायु को वश में करने से भी कठिन है। इतना होते हुए यदि आत्मा है तो फिर यह भी साध्य है ही। रास्ते में हमें कठिनाइयाँ आती हैं इससे यह न मान लेना चाहिये कि वे साध्य हैं। वह तो परम-अर्थ है। और परम-अर्थ के लिए परम त्न की आवश्यकता हो तो इसमें कौन आश्चर्य की बात है ?

ईश्वर साक्षात्कार के लिए मैंने जिस ब्रह्मचर्य की व्याख्या की उसका पालन जो करना चाहते हैं वे यदि अपने प्रयत्न के थ-साथ ही ईश्वर पर श्रद्धा रखने वाले होंगे तो उन्हें निराश ने का कारण नहीं है।

> विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः।
> रसवर्जं रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते ॥ ?

निराहारी के सब विषय तो शान्त हो जाते हैं परन्तु रसों का मन नहीं होता। ईश्वर-दर्शन से रस भी शान्त हो जाते हैं।

इसलिए आत्मार्थी का साधन तो रामनाम और राम या ही है। (आत्मकथा से)

३ साक्षात्कार के साधन

'जो औरों की सेवा करता है उसके हृदय में ईश्वर अपने आप अपनी गरज से रहता है।

'गरीबों की सेवा ही ईश्वर की सेवा है।

'श्रद्धापूर्वक रामनाम का उच्चारण करने से एकाग्रचित्त हो सकते हैं।

'करोड़ों के हृदय का अनुसन्धान करने और उनमें ऐक्य भाव पैदा करने के लिये एक साथ रामनाम की धुन जैसा दूसरा कोई सुन्दर और सरल साधन नहीं।

'रामनाम का चमत्कार सबको प्रतीत नहीं होता क्योंकि वह हृदय से निकलना चाहिये कंठ से तो तोता भी निकालता है।

'भगवान न मन्दिर में है न मस्जिद में न भीतर न बाहर कहीं है तो दीन जनों की भूख और प्यास में है। चलो हम उनकी भूख और प्यास मिटाने के लिये नित्य कातें या एसी बाट मेहनत उनके निमित्त रामनाम लेकर करें।

'मैं बिना किसी हिचकिचाहट के यह कह सकता हूँ कि लाखों आदमियों द्वारा सच्चे दिल से एक ताल और लय के साथ गाये जाने वाली रामधुन की ताकत फौजी ताकत के दिखावे से बिल्कुल अलग और कई गुना बढ़ी चढ़ी है।

'लेकिन अगर ईश्वर का नाम जपने वाले लोग शराब पीते हैं व्यभिचार करते हैं बाजारों में सट्टा खेलते हैं जुआ खेलते हैं और काला बाजार (चोर बाजारी) करते हैं तो उनका रामनाम लेना बेकार है।

है। स्वदेशी तो हमें ईश्वर की ओर से आने वाली शक्ति है क्योंकि वह हमें ऊपर की ओर ले जा रही है। इस मित्र की सूचना पर जो मैंने यह इतना भी लिखा है वह यह बतलाने के लिए लिखा है कि अगर हम ईश्वर की आराधना न करते हों तो हम अपने युद्ध को धर्म-युद्ध न कह सकेंगे। हम लोग तो एक दूसरे के धर्म की रक्षा करने के हेतु से लड़ रहे हैं। हमें तो ईश्वर का नाम भूलना हीं न चाहिये। उसकी रटन तो हमारे हृदय में नित्य होती ही रहनी चाहिए। हमारे हृदय में जितनी बार धड़कन होती है उतनी बार तो अर्थात् निरन्तर हमें उसका चिन्तन जरूर करना चाहिए। इसमें स्वदेशी अवश्य सहायभूत है परन्तु दोनों बात एक नहीं है। स्वदेशी देह का धर्म है, ईश्वर-स्तवन आत्मा का धर्म है।　　(हि न ४-११-२१)

प्रेम का अभाव या अतिरेक ?

राम शंकर भरत इत्यादि अवतारों के लिए मैंने एक वचनी प्रयोग किये हैं। इस पर एक वैष्णव सज्जन प्रेम के साथ उलहना देते हैं। उन्हें इस बात पर दुःख हुआ है कि मैंने राम को श्री रामचन्द्र प्रभु और भरत को श्री भरतसूरी नहीं लिखा और विनयपूर्वक अनुरोध करते हैं कि अब आगे से मुझे उन पवित्र नामों का उल्लेख आदरपूर्वक करना चाहिए। इस सज्जन को मैं खानगी में खत लिख कर जवाब दे देता परन्तु इस खयाल से कि कहीं किसी और वैष्णव के दिल को चोट पहुँची हो अत इस बात का विचार मैं पाठकों के सामने करता हूँ। पत्र-लेखक शायद इस बात को न जानते हों कि मैं खुद भी वैष्णव हूँ और मेरे कुटुम्ब के इष्टदेव श्री रामचन्द्र प्रभु हैं। परन्तु यद्यपि मैंने राम को श्री रामचन्द्र प्रभु केवल उन सज्जन को सन्तुष्ट करने के लिए

रामनाम और स्वदेशी

एक सिक्ख भाई लिखते हैं कि "हाँ, स्वदेशी की बात तो ठी है, परन्तु आप तो स्वयं ईश्वर के भक्त कहाते हैं। फिर आ ईश्वर का नाम पहले क्यों नहीं रखते हैं, सब लोगों को अप खुदा ईश्वर, राम, अथवा वे जिस नाम से भी अपने परमात्म को पहचानते हों उसका नाम जपने की सिफारिश आप क्यों न करते ? हां यह बात सच है, मैं ऐसी बात उनसे नहीं कह हूं। परन्तु मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि केवल शब्दों के उच्चार मात्र से स्वर्ग नहीं मिल सकता। शब्दोच्चार करने के लि योग्यता की जरूरत है। हम जब तक विदेशी वस्त्र पहनते हैं त तक मेरा खयाल है कि हम हिन्दुस्तान में रह कर ईश्वर खुदा का नाम जपने के लायक नहीं हो सकते। अगर एक आदम दूसरे के गले पर छुरी फेरते हुए रामनाम जपता है तो वह रा को लज्जित करता है। इसी प्रकार एक हिन्दुस्तानी के हाथ कते सूत से बने कपड़े को छोड़कर सैकड़ों कोस दूर से अपना कप मंगाना अपने भाई के गले पर मानों छुरी ही फेरना है। चरख कातना एक ऐसी शान्तिमय विधि है कि अपने हाथ को सूत साथ मिलाते हुए अपने हृदय को हम ईश्वर के नाम के सा जोड़ सकते हैं। ईश्वर भक्ति भी ब्रह्मचर्य की तरह स्वदेशी साथ जोड़ी जा सकती है। ईश्वर का नाम न लेने वाला मनुष्य भी अगर स्वदेशी का पालन करे तो वह तो उसका फल पाता ही है पर अगर नास्तिक भी स्वदेशी का पालन करे तो वह भी उसक उतना ही फल प्राप्त कर सकता है। जिस मनुष्य के मन में ईश्वर का नाम है जिसके हृदय में ईश्वर निवास करता है वह तो अपन ही स्वयं भी बहुत लाभ उठाता है और देश को भी लाभ पहुँचात

स्वदेशी तो हमें ईश्वर की ओर से आने वाली शक्ति है
कि वह हमें ऊपर की ओर से आ रही है। इस मित्र की
ना पर जो मैंने यह इतना भी लिखा है वह यह बतलाने के
ए लिखा है कि अगर हम ईश्वर की आराधना न करते हों तो
अपने युद्ध को धर्म-युद्ध न कह सकेंगे। हम लोग तो एक दूसरे
धर्म की रक्षा करने के हेतु से लड़ रहे हैं। हमें तो ईश्वर का
म भूलना हीं न चाहिये। उसकी रटन तो हमारे हृदय में नित्य
ती हो रहनी चाहिए। हमारे हृदय में जितनी बार धड़कन
ती है उतनी बार तो अर्थात् निरन्तर, हमें उसका चिन्तन जरूर
ना चाहिए। इनमें स्वदेशी अवश्य सहायभूत है परन्तु दोनों
त एक नहीं है। स्वदेशी देह का धर्म है, ईश्वर-स्तवन आत्मा
धर्म है। (हिं न ५-११ २१)

प्रेम का अभाव या अतिरेक ?

राम, शंकर, भरत इत्यादि अवतारों के लिए मैंने एक वचनी
प्रयोग किये हैं। इस पर एक वैष्णव सज्जन प्रेम के साथ उमड़ आया
है। उन्हें इस बात पर दुःख हुआ है कि मैंने राम को श्री
रामचन्द्र प्रभु और भरत को श्री भरतसूरी नहीं लिखा और
नम्रपूर्वक अनुरोध करते हैं कि अब आगे से मुझे उन पवित्र
मों का उल्लेख आदरपूर्वक करना चाहिए। इस सज्जन को मैं
निजी में खत लिख कर जवाब दे देता परन्तु इस खयाल से कि
हीं किसी और वैष्णव के दिल को चोट पहुँची हो अतः इस
त का विचार मैं पाठकों के सामने करता हूँ। पत्र-लेखक शायद
ह बात को न जानते हों कि मैं खुद भी वैष्णव हूँ और मेरे
टम्ब के इष्टदेव श्री रामचन्द्र प्रभु हैं। परन्तु यद्यपि मैंने राम
ो श्री रामचन्द्र प्रभु केवल उन सज्जन को सन्तुष्ट करने के लिए

यहां एक बार लिखा है तो भी खुद मुझे 'राम' यह एक नाम ही प्रिय है।

श्री रामचन्द्र प्रभु मुझे अपने से बहुत दूर मालूम होते हैं यद्यपि राम तो मेरे हृदय में राज्य कर रहे हैं। जिन जगहों पर मैंने राम भरत आदि पवित्र नामों का प्रयोग किया है, वहां मेरी दृष्टि में तो मेरी भक्ति ही टपकती है। अगर मेरे भाई ऐसा दावा करें कि राम के प्रति उनका प्रेम मुझसे ज्यादह है तो मैं उन पर राम के दरबार में दावा दायर करूंगा और राम-राज्य में इन्साफ मेरे पक्ष में होगा।

हनुमान ने जिस प्रेम की परीक्षा दी थी वैसी ही परीक्षा देने को मेरा भी चाहता है। प्रिय से प्रिय वस्तु निकट से निकट रहती है। वह तो 'तू' ही हो सकता है। 'आप' में दूरी सूचित होती है। मैंने अपनी मां को किसी दिन 'तुम' कह कर नहीं पुकारा। और अगर भूल से भी मैं उसे तुम कह देता तो वह रोती क्योंकि उसका बेटा उससे दूर हो गया।

मेरी जिन्दगी में एक ऐसा अवसर था जब मैं राम को श्री रामचन्द्र के रूप में पहुचानता था। पर वह जमाना चला गया। राम तो मेरे घर आ गये हैं। उन्हें अगर मैं 'आप' कहूं तो वे मुझ पर एतराज करते हैं। मेरे न मां है, न बाप है न भाई है, मैं बन्धुहीन हूं। राम ही मेरे सर्वस्व हैं। वही मां हैं, बाप हैं, भाई हैं, सबस्व हैं। मैं उसी का जिलाया जीता हूं। सारी स्त्री-जाति में मुझे वही दिखाई देता है। इससे मैं तमाम स्त्रियों को मां या बहन के बराबर मानता हूं। तमाम पुरुषों में मैं उसी को देखता हूं इससे सबको अवस्था के अनुसार बाप, भाई या पुत्र की तरह मानता हूं। हरी राम को मैं भंगी और ब्राह्मण में देखता हूं। इससे दोनों को नमन करता हूं।

प्रभी राम मेरे पास रहते हुए भी दूर भी रहता होगा। इसीसे मुझे 'तू' कह कर पुकारना पड़ता है। जब वह चौबीसों घटे मेरे पास रहेगा तब मुझे 'तू' कहने की भी जरूरत न रहेगी। दूसरे लोग भी मेरी माँ के लिए बंकार का प्रयोग न करते थे। वे तो अनेक आदरवाचक विशेषणों का प्रयोग करते थे। इसी तरह अगर राम मेरा न होता तो मैं भी जरूर उसका अदब लिहाज रखता। पर वह अब मेरा है और मैं उसका गुलाम हूँ। इसलिए चाहता हूं कि वैष्णव बन उससे जुदा होने का बोझ मेरे सिर पर न रक्खें। जिस प्रेम के लिए शिष्टाचार की जरूरत हो क्या वह प्रेम है? तमाम भाषाओं में तमाम धर्मों में ईश्वर 'तू' सर्वनाम के द्वारा ही संबोधित किया जाता है।

द्राविड़ प्रान्त में अम्माई माई नामक मीराबाई जैसी एक महा तेजस्विनी भक्तिन थी। वह नित्य विष्णु मन्दिर में बैठी रहती। कभी उसकी पीठ मूर्ति की तरफ होती और कभी वह मूर्ति के सामने पैर फैलाकर बैठी रहती। एक दिन कोई भावुक दास भक्त वहाँ दर्शन के लिए पहुँचे। ईश्वर के साथ अम्माई माई का कितना गहरा सम्बन्ध था यह बात उस भक्त को मालूम न थी। उसने आँखें तरेर कर अम्माई माई का कुछ सत्याग्रही गालियाँ सुनाई।

अम्माई माई खिलखिला कर हँस पड़ी। उनके हास्य से सारा मन्दिर गूँज उठा। अम्माई माई उस भक्त से बोलीं 'बेटा था यहाँ बैठ जा। बच्चा तू कहाँ से आया है? तूने मुझे धिक्कारा तो। पर तू एक बात बता। मैं अब बूढ़ी हो गई। परन्तु मुझे एक भी जगह ऐसी न मिली जहाँ भगवान न हों। जहाँ कहीं मैं पैर फैलाती हूँ वहीं वह सामने खड़ा दिखाई देता है। अब तू

कोई ऐसी जगह बता, जहाँ वह न हो। तो फिर मैं उसी दिशा में पैर फैलाया करूँ।

यह बात भक्त तो था विनयी। अज्ञान के कारण गुसाईं माई को पहचान न पाया था। वह गद्‌गद् हो गया। आँखों में मोती छलकने लगे और माई के अंगूठे पर टपकने लगे। माई ने पैर खींच लिये। उसने पैर पकड़ लिए। माता मुझ से भूल हुई। मुझे माफ़ करो। मेरा उद्धार करो। माई ने पैर खींच लिया और अपने हाथ से उसे पकड़ कर छाती से लगाया और चूमने लगी। फिर खिलखिलाई और हँस कर कहने लगी "बस बा इसमें माफ़ी की कौन बात है? तू तो मेरा बेटा है। मेरे ऐसे कितने ही बेटे हैं। तू समझदार है। इससे तेरे मन में कुछ शंका हुई कि तुरन्त तूने मुझ से कह दी था भी रज्ज भगवान् तेरी रक्षा करेंगे। पर बेटा माँ की खबर लेते रहना भला।

(हि न ८-९ १९२४)

माला या चरखा ?

नवजीवन में गाँधीजी ने एक गुजराती सज्जन का एक खो कालम लम्बा पत्र छापा है। उसमें लेखक ने गाँधीजी पर अनेक आक्षेप या शंकायें की हैं। वे पूछते हैं कि आप चरखे के पीछे इतने पागल क्यों हो गये हैं? रोजमर्रा चरखा कातने से कोई अच्छा सूतकार भले ही हो जाय वह उत्तम शिक्षा गुरु कैसे हो सकता है? आप जहाँ देखिये वहीं चरखे का भूत लोगों के पीछे लगाने की कोशिश करते हैं। बम्बई में श्री नरनारायण के मंदिर में श्री यादवजी महाराज के भक्त मण्डल के प्रति हुए गाँधीजी के एक पुराने चरखे सम्बन्धी भाषण का जिक्र करते हुए कहते हैं कि मण्डल को माला के बदले चरखा कातने की सलाह देना केवल

यादवजी महाराज का ही अपमान न था सारे हिन्दू धर्म का अपमान था। हर धर्म सम्प्रदाय और पथ के लोग माला तसबी रोजरी आदि फेर कर ईश्वर का नाम लेते हैं। आपका भाषण मूर्खता भरा मालूम हुआ। यदि यादवजी महाराज में हिम्मत होती तो वे आपका भाषण वहीं रोक देते। आप अपने को और अपनी हलचल को धार्मिक कहते हुए भी ईश्वर-भजन से चरखे को उत्तम मानते हैं यह गोलमाल मेरी समझ में नहीं आता। नरसिंह मेहता ने तो एक पद में साफ़ कहा है कि दुनिया इधर की उधर हो जाय पर मैं माला न छोड़ूंगा। माला तो मेरे जीवन के साथ बंधी हुई है। आप कहते हैं कि कातने को मैं साम्प्रदायिक धर्मों से श्रेष्ठ मानता हूं। यदि सचमुच यही बात हो तो यहां नरसिंह मेहता भी मूढ़ बन जाता है।

आपने लिखा है कि विनोबा और बालकोबा सूतकार और वस्त्रकार होकर आज श्रेष्ठ विद्या गुरु बन गये हैं। यदि इस तरह कातने बुनने से ही ईश्वर अधिक नजदीक आता हो तो फिर मन्दिरों में जाने की ईश्वर भजन करने की नाम लेने की और दान आदि देने की क्या जरूरत है। क्या उपनिषदों और शास्त्रों के रचयिताओं की अकल मारी गई थी जो उन्होंने ये सब उल्टी बातें लिख मारी हैं? हिन्द-स्वराज्य में आपने यन्त्रों का विरोध किया है फिर आप छापाखाना क्यों रखते हैं? मोटर रेल जहाज में सफ़र क्यों करते हैं? अहिंसा आपका जीवन प्राण है। फिर भी चोरों और डाकुओं को मारने की सलाह देते हैं। जब सारे भारत को चूस लेने वाले अंगरेजों के प्रति अहिंसाभाव रखने की सलाह देते हैं तो फिर छोटे मोटे घर लूटने वालों की हिंसा क्यों की जाय? यह तो वही हाल हुआ कि जहां चले वहां चला दें

और जहाँ न चले वहाँ 'असमर्थो भवेत् साधु' की तरह साधु बन जायें। अस्पतालों और डाक्टरों को आपने कड़ी आलोचनायें की हैं। फिर भी अस्पताल में जाने के लिए राजीखुशी से आपने दस्तखत कर दिये और अस्पताल तथा डाक्टरों की सहायता ली। सरकार के वहाँ से जाने की सूचना करने पर भी आप जानबूझकर वहीं रहे। विदेशी चीनी और विलायती दवायें सेवन कीं। औरों को माला फेंक कर चरखा कातने की सलाह देते हैं पर जब पूना में आपने देखा कि अब अन्त समय आ गया तो तुलसी की माला लेकर रामनाम जपने लगे। यदि माला से चरखा श्रेष्ठ है तो फिर चरखा छोड़ कर माला क्यों ली ?

यही लेखक के पत्र का यथा संभव उन्हीं की भाषा में सारांश है। गांधीजी का उत्तर नीचे दिया जाता है।—— (सं सम्पादक)

धर्म सीधी लकीर नहीं बल्कि विशाल वृक्ष है। उसके करोड़ों पत्ते हैं जिनमें दो पत्ते भी एक से नहीं हैं। प्रत्येक टहनी जुदी-जुदी है। उसकी एक भी आकृति रेखा गणित की आकृति की तरह नपी हुई नहीं होती। ऐसा होते हुए भी हम जानते हैं कि बीज, टहनी या पत्ते एक ही है। रेखा गणित की आकृति के समूह उनमें कोई बात नहीं है। फिर भी वृक्ष की शोभा के साथ रेखा गणित की आकृति की तुलना तक नहीं हो सकती। धर्म जिस प्रकार सीधी लकीर नहीं उसी प्रकार टेढ़ी भी नहीं। वह सीधी लकीर के परे है। क्योंकि बुद्धि के परे है। वह अनुभव से आता है।

पूर्वोक्त लखक को जिस बात में असंगति दिखाई देती है उसमें मुझे तो बिल्कुल सुसंगति दिखाई देती है। मुझे अपने जीवन में न विरोध दिखाई देता है और न पागलपन। हाँ यह बात सच है कि मनुष्य जिस प्रकार अपनी पीठ को नहीं देख सकता उसी तरह

प्रथम दोष को पागलपन को भी नहीं देख सकता। परन्तु ज्ञानी लोगों ने धर्मी और पागल में भेद नहीं किया है। इसीलिए मैं सन्तोष मानकर बैठा हूँ कि मैं पागल नहीं हूँ सचमुच धर्मी हूँ। पर इसका इन्साफ़ तो मेरी मौत के बाद ही हो सकता है।

मैं नहीं मानता कि यादवजी महाराज ने मीस्ता से मेरा विरोध नहीं किया। क्योंकि मेरे कथन का अर्थ वे अच्छी तरह समझ गये थे और उस समय मेरी बात से सहमत हुए थे। होते भी क्यों नहीं? मैंने नारायण का नाम छोड़कर चरखा चलाने की बात नहीं कही थी। मैंने सुझाया था कि चरखा कातते हुए भी नारायण का जप किया जा सकता है। और आज जब कि सारे देश में आग लग रही है तब तो चरखे रूपी डोल में सूत रूपी जल भर कर नारायण नाम लेते हुए उस आग को बुझाना ही हम सबका धर्म है।

मुझे सब बातों में चरखा ही चरखा दिखाई देता है क्योंकि मैं चारों ओर निर्धनता और दरिद्रता हा देखता हूँ। हिन्दुस्तान के नर कंकालों को जब तक अन्न वस्त्र न मिले तब तक उनके लिए धर्म नाम की कोई चीज ही दुनिया में नहीं। वे आज पशु की तरह जीवन बिता रहे हैं और उसमें हमारा हाथ है। इसलिए चरखा हमारे प्रायश्चित का साधन है। अपंग की सेवा भी एक धर्म है। भगवान हमें अपंग के रूप में हमेशा दर्शन देते हैं पर हम तिलक छापा करते हुए भी उनकी और ईश्वर की अवहेलना करते हैं। ईश्वर वेद में है भी और नहीं भी। जो वेद का सीधा अर्थ करता है उसमें उसे उसकी ज्योति दिखाई देती है और जो उसके अक्षर पर चिपटा रहता है उसे हम वेदिया कहते हैं। हाँ नरसिंह मेहता ने माला की स्तुति बेशक की है पर वहाँ वह उचित भी थी। उन्हीं मेहता शिरोमणि ने कहा है तिलक और तुलसी धारण

करने से क्या हुआ ? माला हाथ में लेकर नाम जपने से भी क्या हुआ ? और वेद व्याकरण और साहित्य का पण्डित होने से भी क्या हुआ ? मुसलमान अवश्य तसबी फरते हैं और ईसाई रोजरी परन्तु यदि किसी को सांप काट जाय और वे तसबी या रोजरी छोड़ कर उसे मदद देने न जांय तो वे अपने को धर्म भ्रष्ट मानेंगे। ब्राह्मण केवल वेदों को पढ़कर ही धर्म-विधायक नहीं हो सकते। यदि होते तो भट्ट मेक्समूलर धर्म-विधायक हो जाते। वर्तमान युगधर्म को जानने वाला ब्राह्मण जरूर वेदाध्ययन को गौण मान कर चरखा-धर्म का प्रचार करेगा और करोड़ों क्षुधा पीड़ितों की भूख बुझाने के बाद फिर वेदग्रस्त हो जायगा।

चरखा कातना को मैंने साम्प्रदायिक धर्मों से श्रेष्ठ माना है। इसका अर्थ यह नहीं सम्प्रदाय छोड़ दिये जायें। जिस धर्म का पालन हर सम्प्रदाय और धर्म वालों के लिये जरूरी है वह तमाम सम्प्रदायों से अवश्य श्रेष्ठ होगा और इसलिए मैं कहता हूँ कि सेवा भाव से जो ब्राह्मण चरखा कातता है वह ज्यादह अच्छा ब्राह्मण बनता है, मुसलमान ज्यादह अच्छा मुसलमान और वैष्णव ज्यादह अच्छा वैष्णव बनता है।

मैंने यह समझकर कि अब अन्त समय आ गया है, रामनाम का जप नहीं किया न माला फेरी। बल्कि उस समय मुझमें चरखा कातने की शक्ति नहीं थी। जब माला मुझे रामनाम जपने में मदद करती है तब माला जपता हूँ। जब इतना एकाग्र हो जाता हूँ कि माला विघ्नरूप मालूम होती है तब उसे छोड़ देता हूँ। सोते-सोते यदि चरखा कात सकूं और मुझे रामनाम लेने में उसकी सहायता की जरूरत हो तो मैं अवश्य माला के बदले चरखा चलाऊंगा। यदि माला और चरखा दोनों चलाने

का सामर्थ्य हो और दो में से किसी एक को पसन्द करना हो तो जब तक भारत में फ़ाकेकशी जारी है तब तक मैं जरूर चरखा रूपी माला को पसन्द करूँगा। मैं एक ऐसा समय आने की राह देख रहा हूँ जब रामनाम का जप करना भी एक उपाधि मालूम होने लगे। जब यह अनुभव होगा कि 'राम' वाणी से भी परे है तब 'नाम' लेने की जरूरत ही न रह जायगी। चरखा माला और रामनाम ये मेरे लिए जुदी-जुदी चीजें नहीं हैं। मुझे तो ये दोनों सेवाधर्म की शिक्षा देती हैं। सेवा धर्म का पालन किये बिना मैं अहिंसा धर्म का पालन नहीं कर सकता और अहिंसा धर्म का पालन किये बिना मैं सत्य की खोज नहीं कर सकता और सत्य के बिना धर्म नहीं। सत्य ही राम है नारायण है, ईश्वर है खुदा है अल्लाह है, और गॉड है।

हिन्द-स्वराज्य में यन्त्रों के सम्बन्ध में मैंने जो कुछ लिखा है वह यथार्थ ही है। उसमें अखबारों की बात भी आ जाती है। शंकाशील उसे देख लें। फिर उन्हें याद रखना चाहिए कि फ़िलहाल मैं हिन्द स्वराज्य को देश के सामने नहीं रख रहा हूँ बल्कि पार्लिमेंटरी अर्थात् बहुमतवाला स्वराज्य रख रहा हूँ। अभी मैं हर तरह के यन्त्र के विनाश की प्रेरणा नहीं कर रहा हूँ बल्कि चरखे को सर्वोपरि यन्त्र बना रहा हूँ। हिन्द-स्वराज्य में आदर्श स्थिति का चित्र खींचा गया है। उसमें जिसका पालन मैं नहीं कर रहा हूँ उसे मेरी कमजोरी समझ लेना चाहिए। मैं अहिंसा को परम-धर्म मानता हूँ। फिर भी खाने पीने में हिंसा किया ही करता हूँ। हाँ मैं अहिंसा का आदर्श अपने सामने रखकर उसमें समय के पालन का प्रयत्न करता हूँ। उस प्रवृत्ति को बढ़ाने का नहीं बल्कि घटाने का प्रयत्न करता हूँ।

अस्पतालों के सम्बन्ध में मैंने जो कुछ लिखा है वह भी यथार्थ है। फिर भी जब तक मुझे शरीर का मोह रहा है तब तक क्या करता हूं। हां यह जरूर चाहता हूं कि यह मोह कम हो। मैं अस्पताल में क़ैदी की हैसियत से गया था और छूटने पर तुरन्त वहां से भाग खड़े होने की जल्दत न दिखाई थी। जिन लोगों ने इतने त्याग और कष्टसहन का परिचय दिया था उनकी देखभाल में रहना मुझे धर्म दिखाई दिया। अस्पताल में मैंने अपना व्रतों का पालन किया है। यदि मुझे वहां न से गए होते तो मैं वहाँ दौड़ कर न जाता। अस्पताल में अपनी खुशी से नहीं गया था। वहां जाने की सूचना का विरोध भी मैंने नहीं किया। विदेशी दवाएं न खाने का व्रत मैंने नहीं लिया है। परन्तु मैं विदेशी चीजें खाता ही नहीं। मुझे चीनी आदि खाना ही नापसन्द है। पिछली बीमारी में ही मैंने चीनी खाना शुरू किया था पर वह स्वदेशी ही थी। दवाएं भी वही थीं जिनके खाने से मेरे व्रत में बाधा न पड़ती थी।

फिर भी यह बात सच है कि मेरी यह बीमारी मेरी तात्त्विक कल्पनाओं के खिलाफ़ है और मेरे लिए शर्म की बात है। किसी किस्म की दवा लेना मेरे लिए हीनता ही है। अस्पताल में जाने लायक़ हाल हो जाय यह तो उससे भी अधिक। मेरी इन कमजोरियों के लिए लेखक और पाठक मुझे क्षमा की दृष्टि से देखें और मुझे निबाह लें और ऐसा आशीर्वाद दें कि मैं इन उपाधियों से मुक्त होकर बिलकुल निर्विकार हो जाऊं और जब तक यह आशीर्वाद फलीभूत न हो तब तक मैं जैसा हूं उसीको निबाह लें और सहन कर लें।

चोरों और डाकुओं को मारना मैंने पसन्द नहीं किया है। मैंने

तो पसन्द किया है उन्हें भी प्रेम से जीतना । परन्तु जो लोग इस धर्म का पालन न कर सकते हों और अपने आश्रित तथा धन दौलत की रक्षा करना चाहते हों और जिस-जिस के पास इतने प्रेम-बल की पूंजी नहीं हो, उन्हें चोरों और डाकुओं को मार कर भी आत्मरक्षा करने का अधिकार है ।

अंगरेजों को चोरों डाकुओं की उपमा देने में महा विचार दोष है । चोर-डाकू बल-पूर्वक लूटते हैं । अंगरेज मनहरण करके लूटते हैं । इससे उनकी लूट में पद्धतिदोष है । शराब बेचने वाले भी शराब बेचकर मेरा धन और मेरी आत्मा को लूटते हैं । उसे मैं मारने की कोशिश करूँ या उसका त्याग करने को ? पर यदि कोई अंगरेज दूसरे के बदन पर हमला करे । अथवा कोई शराब का दुकानदार दूसरे को जबरन शराब पिलाये और इन दोनों से दुखी होने वाला शख्स यदि प्रेम से उन्हें वशीभूत करने का सामर्थ्य न रखता हो तो जरूर मारकर हटा सकता है । फिर वह अंगरेज या शराबी एक हो या अनेक और सबल हो या निर्बल ।

इस पत्र का जवाब मैंने दिया तो परन्तु अभी मुझे सन्देह है कि मैंने यह ठीक किया या अनुचित किया । लेखक के हेतु को निर्मल समझकर मैंने यह जवाब दिये हैं । परन्तु एसे लेखों में बहुत विचार दोष होते हैं । यह बात मेरे जवाबों से जानी जा सकती है ।

जिसमें हो पढ़े लिखे लोगों का जीवन विचार शून्य हो गया दिखाई देता है । जब तक एक सिद्धान्त से उपसिद्धान्त घटा लेने की शक्ति न हो तब तक कह सकते हैं कि सिद्धान्तों का ज्ञान ही नहीं है । लेखक ने यदि इन पर गहरा विचार किया होता तो ये खुद ही उन जवाबों पर पहुँचते जाते जो मैंने दिये हैं । सच पूछिये तो ये तमाम जवाब मेरे पहले लेखों में आ चुके हैं । परन्तु लेखक

की विचार विविक्तता हमारा एक सर्व सामान्य दोष है। मेरे नाम जो अनेक चिट्ठियाँ आती हैं उनसे मैं यही बात देखता हूँ। इसलिये मैंने यह जवाब दिया है। परन्तु हर पाठक और लेखक को मेरी सलाह है कि वे प्रत्येक बात पर खूब विचार करें जिससे वे अनेक मिथ्याभासों से बच जायेंगे। शिक्षा बिना विचार के व्यर्थ है।

(हि० न १०-८-१९३४)

'मूर्तिपूजक' और 'भंजक'

अपने एक भाषण में मैंने प्रसंगोपात कहा था कि मैं मूर्ति-पूजक हूँ पर मैं मूर्ति-भंजक भी हूँ। मेरा यह भाषण यदि पूरा छापा गया होता तो इसका अर्थ अच्छी तरह समझ में आने लायक था। मेरे भाषण की रिपोर्ट वैसी नहीं है। एक सज्जन उसको उद्धृत करके लिखते हैं —

"मुझ जैसे लोग कि जिनकी श्रद्धा मूर्तिपूजा से उड़ गई है पर फिर भी कितनी ही बार मूर्ति-पूजा के रूप को (जिस तरह कि मृत पिता के चित्र या मृत मित्र के पत्र को) आदर की दृष्टि से देखते हैं उन्हें आप इन शब्दों का अर्थ समझाकर यदि मार्ग-सूचक होंगे तो बड़ा उपकार होगा।

यहाँ मूर्ति शब्द के अर्थ जुदे-जुदे हैं। मूर्ति का अर्थ यदि बुत (पुतला) लिया जाय तो मैं मूर्ति-भंजक हूँ। मूर्ति का अर्थ यदि ध्यान करने अथवा मौन प्रदर्शित करने या स्मृति कराने का साधन लिया जाय तो मैं मूर्तिपूजक हूँ। मूर्ति का अर्थ केवल आकृति ही नहीं है। जो एक पुस्तक को भी पूजा आँखें मूंदकर करते हैं वे मूर्तिपूजक अथवा बुतपरस्त हैं। बुद्धि का प्रयोग किये बिना सारासार विवेक के बिना अर्थ की छानबीन किये बिना वेद तथा अन्य शास्त्रों में जो कुछ लिखा है, उसको आँखें मूंदकर मानना

अंध मूर्ति-पूजा है और इसीलिये बुतपरस्ती है। जिस मूर्ति को लेकर तुलसीदास पुलकित गात्र हुए, ईश्वरमय बने राममय बने उसका पूजन करने से वे शुद्ध मूर्तिपूजक थे और इसीलिये वंदनीय तथा अनुकरणीय थे।

जितने वहम हैं—अंध-विश्वास हैं सब बुतपरस्ती अथवा अंध तथा निंद्य मूर्तिपूजा है। जो हर तरह के रिवाज को धर्म मानते हैं, वे निंद्य मूर्तिपूजक हैं। अतएव ऐसी जगह में मूर्ति भंजक हूं। मैं शास्त्र के प्रमाण देकर असत्य को सत्य और कठोर को दया तथा वैरभाव को प्रेम बनाकर नहीं सिखा सकता। इसलिये और इस तरह में मूर्ति भंजक हूं। द्वि-अर्थी या क्षेपक श्लोक बताकर अथवा अमको देकर अंत्यजों का तिरस्कार या त्याग या उनकी अस्पृश्यता मुझे कोई नहीं सिखा सकता इसलिये मैं अपने को मूर्ति भंजक मानता हूं। मां बाप की अनीति को भी अनीति के रूप में देख सकता हूं और इस देश पर अथाह प्रेम होते हुए भी मैं इसके भी दोष खोलकर बता सकता हूं और इसीलिये मैं मूर्ति-भंजक हूं।

मेरे दिल में वेदादि के प्रति पूरा-पूरा और स्वाभाविक तौर पर आदर भाव है। मैं पाषाण में भी ईश्वर को देखता हूं। साधु पुरुषों की प्रतिमाओं के प्रति मेरा मस्तक अपने आप झुक जाता है, इसलिये मैं अपने आपको मूर्तिपूजक मानता हूं।

इसका अर्थ यह है कि गुण-दोष बाह्य कार्य की अपेक्षा आंतरिक भाव में विशेष रूप से होता है। किसी भी कार्य की परीक्षा कर्ता के भाव से होती है। उसी माता का सविकार स्पर्श पुत्र को नरकवास प्राप्त कराता है, उसी माता का निर्विकार स्पर्श पुत्र को स्वर्ग पहुँचाता है। द्वेषभाव से चलाई हुई छुरी प्राण लेती है,

प्रेमभाव से मगाई हुई छूरी प्राण लाती है। बिल्ली के वही दांत चूहे के लिये घातक होते हैं पर अपने बच्चों के लिये रक्षक होते हैं। दोष मूर्ति में नहीं है, दोष ज्ञान-हीन पूजा में है। (हि न ७-४ १९१९)

ईश्वर-भजन

ईश्वर भजन यानी प्रार्थना किस तरह और किस की करें यह समझ में नहीं आता और आप तो बारबार लिखते हैं प्रार्थना करो। सो आप समझाइये कि यह कैसे हो सकती है ?

एक सज्जन इस प्रकार पूछते हैं। ईश्वर भजन का अर्थ है उसके गुण का गान प्रार्थना का अर्थ है अपनी अयोग्यता की अपनी अशक्ति की स्वीकृति। ईश्वर के सहस्त्र अर्थात् अनेक नाम हैं। अथवा यों कहिए कि वह नामहीन है। जो नाम हमको अच्छा मालूम हो उसी नाम से हम ईश्वर को भजें उसकी प्रार्थना करें। कोई उसे राम के नाम से पहचानता है तो कोई कृष्ण के नाम से कोई उसे रहीम कहते हैं तो कोई गॉड। ये सब एक ही चैतन्य को भजते हैं। परन्तु जिस प्रकार सब तरह का भोजन सब को नहीं रुचता उसी तरह सब नाम सबको नहीं रुचता। जिसको जिसका सहवास होता है उसी नाम से वह ईश्वर को पहचानता है और वह अन्तर्यामी सर्वशक्तिमान होने के कारण हमारे हृदय के भाव को पहचान कर हमारा योग्यता के अनुसार हमको जवाब देता है।

प्रार्थना या भजन जीभ से नहीं वरन हृदय से होता है। इसी से गूंग तुतले मूढ भी प्रार्थना कर सकते हैं। जीभ पर अमृत हो और हृदय में हलाहल हो तो जीभ का अमृत किस काम का ? कागज के गुलाब से सुगंध कैसे निकल सकती है ? इसलिए जो सीधे तरीके से ईश्वर को भजना चाहता हो वह अपने हृदय को बस में रखे। हनुमान की जीभ पर जो राम था वही उसके हृदय

का स्वामी था और इसीसे उसमें अपरिमित बल था। विश्वास से जहाज चलते हैं विश्वास पर पर्वत उठाये जाते हैं विश्वास से समुद्र लांघा जाता है, इसका अर्थ यह है कि जिसके हृदय में सर्वशक्तिमान ईश्वर का निवास है वह क्या नहीं कर सकता? वह चाहे कोढ़ी हो चाहे क्षय का रोगी हो जिसके हृदय में राम (ईश्वर) बसते हैं उसके सब रोग सर्वथा नष्ट हो जाते हैं।

ऐसा हृदय किस प्रकार हो सकता है। यह सवाल प्रश्न कर्ता ने नहीं पूछा है। परन्तु मेरे जवाब में से निकलता है। मुंह से बोलना तो हमें कोई भी सिखा सकता है पर हृदय को वाणी कौन सिखा सकता है? यह तो भक्त-जन ही कर सकते हैं। भक्त किसे कहें? गीताजी में तीन जगह खास तौर पर और सब जगह आम तौर पर इसका विवेचन किया गया है। परन्तु उसकी संज्ञा या व्याख्या मालूम हो जाने से भक्तजन मिल नहीं जाते। इस जमाने में यह दुर्लभ है। इसीसे मैंने तो सेवाधर्म पेश किया है। जो औरों की सेवा करता है उसके हृदय में ईश्वर अपने आप अपनी गरज से रहता है।

इसी से अनुभव ज्ञान प्राप्त नरसिंह मेहता ने गाया है—

वैष्णव जन तो तेने कहिए जे पीड़ पराई जाणे रे

और पीड़ित कौन है? अन्त्यज और कंगाल। इन दोनों की सेवा तन मन और धन से करनी चाहिये। जो अंत्यज को अछूत मानता है वह उसकी सेवा तन से क्या करेगा? जो कंगाल के लिए चरखा चलाने जितना भी शरीर हिलाने में आलस्य करता है अनेक बहाने बनाता है वह सेवा का मर्म नहीं जानता। कंगाल यदि अपंग हो तो उसे सदावर्त दिया जा सकता है। पर जिसके हाथ पांव मौजूद हैं उसे बिना मेहनत के भोजन देना मानों उसका

पठन करना है। जो मनुष्य कंगाल के सामने बैठ कर चरखा चलाता है और उसे चरखा चलाने के लिए कुसलाता है वह ईश्वर को अनन्य सेवा करता है। भगवान ने कहा है, जो मुझे पत्र पुष्प पानी इत्यादि भक्ति-पूर्वक देता है वह मेरा सेवक है। भगवान् कंगाल के घर अधिक रहते हैं यह तो हम निरन्तर सिद्ध होता हुआ देखते हैं। इसीसे कंगाल के लिए कातना महा-प्रार्थना है महायज्ञ है महा-सेवा है।

अब प्रश्नकर्ता को जवाब दिया जा सकता है। ईश्वर की प्रार्थना किसी भी नाम से की जा सकती है। उसकी सच्ची रीति है हृदय से प्रार्थना करना। हृदय की प्रार्थना सीखने का मार्ग सेवा-धर्म है। इस युग में जो हिन्दू अंत्यज की सेवा हृदय से करता है वह शुद्ध प्रार्थना करता है। हिन्दू तथा हिन्दुस्तान के दूसरे अन्य धर्मी जो कंगाल के लिए हृदय से चरखा चलाते हैं, वे भी सेवा-धर्म का पालन करते हैं और हृदय की प्रार्थना करते हैं।

(हि न २४-९ १९२९)

एकाग्रता

प्रश्न—आप चित्त को एकाग्र करने का कोई उपाय बतायेंगे? किसी खास विषय म एकाग्र होने के लिए आप किस उपाय को काम में लाते हैं?

उत्तर—अभ्यास से ही चित्त एकाग्र होता है शुभ और इष्ट विषय में लीन होने से एकाग्र बनने का अभ्यास हो सकता है जैसे कोई रोगी की सेवा करने में कोई चरखा चलाने में और कोई खादी के प्रचार में। श्रद्धापूर्वक रामनाम का उच्चारण करने से एकाग्र हो सकते हैं। (हि न ११-४-१९२९)

प्रार्थना किसे कहते हैं

एक डाक्टरी डिग्री प्राप्त किये हुए महाशय प्रश्न करते हैं :—

प्रश्न—प्रार्थना का सबसे उत्तम प्रकार क्या हो सकता है ? उसमें कितना समय लगाना चाहिए ? मेरी राय में तो न्याय करना ही उत्तम प्रकार की प्रार्थना है और जो मनुष्य सबको न्याय करने के लिए सच्चे दिल से तैयार होता है उसे दूसरी प्रार्थना करने की कोई आवश्यकता नहीं होती है। कुछ लोग तो सन्ध्या करने में बहुत सा समय लगा देते हैं परन्तु सैकड़े पीछे ९५ मनुष्य तो उस समय जो कुछ भी वे बोलते हैं उसका अर्थ भी नहीं समझते हैं। मेरी राय में तो अपनी मातृभाषा में ही प्रार्थना करनी चाहिए उसका ही आत्मा पर उत्तम असर पड़ सकता है। मैं तो यह भी कहता हूं कि सच्ची प्रार्थना यदि एक मिनट के लिए की गई हो तो वह भी काफ़ी होगी। ईश्वर को पाप न करने का अभिवचन देना ही काफ़ी है।

उत्तर—प्रार्थना का अर्थ है धर्मभावना और आदरपूर्वक ईश्वर से कुछ मांगना। परन्तु किसी भक्तिभावयुक्त कार्य को व्यक्त करने के लिए भी इस शब्द का प्रयोग किया जाता है। लेखक के मन में जो बात है उसके लिए भक्ति शब्द का प्रयोग करना ही अधिक अच्छा है। परन्तु उसकी व्याख्या का विचार छोड़कर हम इसी का ही विचार करें कि करोड़ों हिन्दू, मुसलमान ईसाई यहूदी और दूसरे लोग रोजाना अपने सृष्टा की भक्ति करने के लिए निश्चित किये हुए समय में क्या करते हैं ? मुझे तो यह मालूम होता है कि वह तो सृष्टा के साथ एक होने की हृदय की उत्कटेच्छा को प्रकट करना है और उसके आशीर्वाद के लिए याचना करना है। इसमें मन की वृत्ति और भावों का ही महत्व

होता है, शब्दों का नहीं और अक्सर पुराने जमाने से जो शब्द रचना चली आती है उसका असर होता है जो कि मातृभाषा में उसका अनुवाद करने पर सर्वथा नष्ट हो जाता है। गुजराती में गायत्री का अनुवाद कर उसका पाठ करने पर उसका वह असर न होगा जो कि असल गायत्री से होता है। राम शब्द के उच्चार से लाखों करोड़ों हिन्दुओं पर फौरन असर होगा और गॉड शब्द का अर्थ समझने पर भी उसका उन पर कोई असर न होगा। चिरकाल के प्रयोग से और उनके उपयोग के साथ समोचित पवित्रता से शब्दों को शक्ति प्राप्त होती है। इसलिये सबसे अधिक प्रचलित मन्त्र और श्लोकों की संस्कृत भाषा रखने के लिये बहुत सी दलीलें दी जा सकती हैं। परन्तु उनका अर्थ अच्छी तरह समझ लेना चाहिए यह बात तो बिना कहे ही मान ली जानी चाहिए। ऐसी भक्तियुक्त क्रियायें किस समय करनी चाहिए इसका कोई निश्चित नियम नहीं हो सकता है। इसका आधार जुदे-जुदे व्यक्तियों के स्वभाव पर ही होता है। मनुष्य के जीवन में ये क्षण बड़े ही कीमती होते हैं। ये क्रियायें हमें नम्र और शान्त बनाने के लिए होती हैं और उससे हम इस बात का अनुभव कर सकते हैं कि उसकी इच्छा के बिना कुछ भी नहीं हो सकता है और हम तो उस प्रजापति के हाथ में मिट्टी के पिंड हैं। ये पल ऐसी हैं कि इसमें मनुष्य अपने भूतकाल का निरीक्षण करता है, अपनी दुर्बलता को स्वीकार करता है और क्षमा याचना करते हुए अच्छा बनने की और अच्छा कार्य करने की शक्ति के लिये प्रार्थना करता है। कुछ लोगों को इसके लिए एक मिनट भी बस होता है तो कुछ लोगों को २४ घण्टे भी काफी नहीं हो सकते हैं। उन लोगों के लिए जो ईश्वर के अस्तित्व को अपने में अनुभव

करते हैं, केवल मेहनत या मजदूरी करना भी प्रार्थना हो सकती है। उनका जीवन ही सतत प्रार्थना और भक्ति के कार्यों से बना होता है। परन्तु जो लोग जो केवल पाप कर्म ही करते हैं प्रार्थना में जितना भी समय लगायेंगे उतना ही कम होगा। यदि उनमें धैर्य और श्रद्धा होगी और पवित्र बनने की इच्छा होगी तो वे तब तक प्रार्थना करेंगे जब तक कि उन्हें अपने में ईश्वर की पवित्र उपस्थिति का निर्णयात्मक अनुभव न होगा। हम साधारण वर्ग के मनुष्यों के लिए तो इन दो सिरे के मार्गों के मध्य का एक और मार्ग भी होना चाहिए। हम ऐसे उन्नत नहीं हो गये हैं कि यह कह सकें कि हमारे सब कर्म ईश्वरार्पण ही हैं और शायद इतने गिरे हुए भी नहीं हैं कि केवल स्वार्थी जीवन ही बिताते हों। इसलिए सभी धर्मों ने सामान्य भक्ति भाव प्रदर्शित करने के लिए अलग समय मुकर्रर किया है। दुर्भाग्य से इन दिनों यह प्रार्थनायें जहाँ धार्मिक नहीं होती हैं वहां मांत्रिक और औपचारिक हो गई हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि हम प्रार्थनाओं के समय वृत्ति भी शुद्ध और सच्ची हो।

निश्चयात्मक वैयक्तिक प्रार्थना जो ईश्वर से कुछ मांगने के लिए की गई हो वह तो अपनी ही भाषा में होनी चाहिए। इस प्रार्थना से कि ईश्वर हमें हर एक जीव के प्रति न्यायपूर्वक व्यवहार रखने की शक्ति दे और कोई बात बढ़कर नहीं हो सकती है।

(हि न १०-६-२६)

गीता और रामायण

बहुतेरे नौजवान कोशिश करते हुए भी पाप से नहीं बच पाते। वे हिम्मत खो बैठते हैं और फिर दिन बदिन पाप की गहराई में क़दम बढ़ाते जाते हैं। बहुतेरे तो बाद में पाप ही को पुण्य भी मानने

लगते हैं। ऐसों को मैं कई बार गीताजी और रामायण पढ़ने और उन पर विचार करने को सलाह देता हूँ। लेकिन वे इस बात में दिलचस्पी नहीं ले सकते। इसी तरह के नौजवानों की दिलजमई के लिये इन्हें मीरज बंगाल को मरफ से एक नौजवान के पत्र का कुछ हिस्सा जो इस विषय से सम्बन्ध रखता है, नीचे देता हूँ —

मन साधारणतः स्वस्थ है। लेकिन जब कुछ दिनों तक मन बिलकुल स्वस्थ रह चुकता है और खुद इस बात का खयाल हो जाता है तो फिर ऐ पछाड़ खानी ही पड़ती है। विकार इतने जबरदस्त बन जाते हैं कि उनका विरोध करने में बुद्धिमानी नहीं मालूम पड़ती लेकिन ऐसे समय में प्रार्थना गीतापाठ और तुलसी रामायण से बड़ी मदद मिलती है। रामायण को एक बार पढ़ चुका हूँ दुबारा सती की कथा तक आ चुका हूँ। एक समय था जब रामायण का नाम सुनते ही घबड़ाता था लेकिन आज तो उसके पन्ने-पन्ने में रस पा रहा हूँ। एक ही पृष्ठ को पाँच-पाँच बार पढ़ता हूँ फिर भी दिल उकताता नहीं। काकभुशुण्डी की जिस कथा के कारण मेरे दिल में तुलसी रामायण के प्रति घृणा पैदा हो गई थी वह बुरी लगती थी वही आज सबसे अच्छी मालूम होती है। इसमें मैं गीता के ११वें अध्याय से भी ज्यादा काव्य देख रहा हूँ। दो बार साल पहले आये दिल से स्वच्छता पाने की कोशिश करने पर भी उसे न पाकर जो निराशा पैदा होती थी आज उस निराशा का पता भी नहीं है उलटे मन में विचार आता है कि जो विकास अनन्त काल बाद होने वाला है उसे आज ही पा लेने का हठ करना कितनी मूर्खता है। सारे दिन में कातते समय और रामायण का अभ्यास करते समय आराम मिलता है।

इस पत्र के लेखक में जितनी निराशा और जितना अविश्वास था शायद ही किसी दूसरे नौजवान में उतनी निराशा और उतना अविश्वास हो। रोगों ने उसके शरीर में घर कर लिया था। लेकिन आज उसमें जिस श्रद्धा का उदय हुआ है उससे नवयुवक जगत् में आशा का संचार होना चाहिये। जो लोग अपनी इन्द्रियों को जीत सके हैं उनके अनुभव पर भरोसा करके लगन के साथ रामायण वगैरह का अभ्यास करने वाले का चित्त पिघले बिना रह ही नहीं सकता। मामूली विषयों के अभ्यास के लिये भी जब हमें अक्सर बरसों तक मेहनत करनी पड़ती है कई तरकीबों से काम लेना पड़ता है तो जिसमें सारी जिन्दगी की और उसके बाद की शान्ति का भी सवाल छुपा हुआ है उस विषय के अभ्यास के लिए हममें कितनी लगन होनी चाहिए ! तिस पर भी जो लोग थोड़े में थोड़ा समय और ध्यान देकर रामायण तथा गीता में से रसपान करने की आशा रखते हैं उनके लिये क्या कहा जाय ?

ऊपर के पत्र में लिखा है कि पत्र-लेखक को अपने स्वस्थ होने का खयाल आते ही विकार फिर से चढ़ दौड़ते हैं। जो बात शरीर के लिये ठीक है वही मन के लिए भी ठीक है। जिसका शरीर बिलकुल चंगा है उसे अपने अच्छेपन का खयाल कभी आता ही नहीं न उसकी कोई जरूरत ही है क्योंकि तन्दुरस्ती तो शरीर का स्वभाव ही है। यही बात मन को भी लागू होती है। जिस दिन मन की तन्दुरस्ती का खयाल आवे समझ लो कि विकार पास आकर झांक रहे हैं। अतः मन को हमेशा स्वस्थ बनाये रखने का एकमात्र उपाय उसे हमेशा अच्छे विचारों में लगाये रखना है। इसी कारण रामनाम वगैरह के जप की बात की खोज हुई और वे गेय माने गये। जिसके हृदय में हर घड़ी राम

का निवास हो उस पर विकार चढ़ाई कर ही नहीं सकते। सच तो यह है कि जो शुद्ध बुद्धि से रामनाम जपता है समय पाकर रामनाम उसके हृदय में घर कर लेता है। इस तरह प्रवेश होने के बाद रामनाम उस मनुष्य के लिए एक अभेद्य किला बन जाता है। बुराई, बुराई का खयाल करते रहने से नहीं मिटती है। अच्छाई का विचार करने से बुराई चढ़कर मिट जाती है। लेकिन बहुत बार देखा गया कि लोग अच्छी नीयत से उल्टी तरकीब काम में लाते हैं 'यह कैसे जाई कहाँ से आई ?' वगैरह विचार करने से बुराई का ध्यान बढ़ता जाता है। बुराई को मिटाने का यह उपाय हिंसक कहा जा सकता है। इसका सच्चा उपाय तो बुराई से असहयोग करना ही है। जब बुराई हम पर आक्रमण करे तो उसे 'भागजा' कहने की कोई जरूरत नहीं। हमें तो यह समझ लेना चाहिये कि बुराई नाम की कोई चीज है ही नहीं और हमेशा स्वच्छता का अच्छाई का विचार करते रहना चाहिये। 'भाग जा' कहने में डर का भाव है। उसका विचार तक न करने में निडरता है। हमें सदा यह विश्वास बढ़ाते रहना चाहिये कि बुराई हमें छू तक नहीं सकती। अनुभव द्वारा यह सब सिद्ध किया जा सकता है। (हि न १=४ १९९१

नामजप की महिमा

'राम-जप के द्वारा पापहरण इस प्रकार होता है। शुद्ध भाव से नाम जपने वालों में श्रद्धा होती ही है। नाम-जप के द्वारा पापहरण होगा ही इस निश्चय से वह आरम्भ करता है। पापहरण अर्थात् आत्म-शुद्धि। श्रद्धा के साथ नाम जपने वाला थक ही नहीं सकता अर्थात् जो जीभ से बोला जाता है वह अन्त में हृदय में उतरता है और उससे आत्मा की शुद्धि होती है। यह अनुभव

निरपवाद है। मानस शास्त्रियों का भी यह विचार है कि मनुष्य जैसा विचार करता है वैसा बनता है। रामनाम इस नियम का ही अनुसरण करता है। नाम-जप पर मेरी श्रद्धा अटूट है। नाम-जप की जिसने खोज की वह अनुभवी था और उसको यह खोज अत्यन्त महत्व की है यह मेरा दृढ़ विश्वास है। निरक्षर की भी शुद्धि का द्वार खुला रहना चाहिये यह नाम-जप से होता है। (देखो गीता ६ २२ १०-१७)

माला इत्यादि एकाग्र होने का साधन है।

(यरवदा मन्दिर से लिखे गये एक पत्र से)

योग की क्रिया

(गांधीजी कोई आध्यात्मिक क्रियाएँ करते हैं या नहीं, और किस पुस्तक के पढ़ने से उन्हें सहायता मिली है, यह जानने की जि मैम्यूल को जिज्ञासा थी। गांधीजी ने इसका उत्तर इस प्रकार दिया)।

योग की क्रियाएँ तो मैं जानता नहीं। मैं जो क्रिया करता हूँ उसे तो बचपन में अपनी दाई से सीखा था। मुझे भूत का डर लगता था। इस पर वह मुझे कहा करती कि 'भूत जैसी कोई चीज है ही नहीं फिर भी अगर तुझे डर लगे तो रामनाम से लिया कर। मैंने बचपन में जो सीखा उसने मेरे मानसिक आकाश में विशाल रूप धारण कर लिया है। इस सूर्य ने मेरी ओर-से घोर अन्धकार की घड़ी में मुझे प्रकाश प्रदान किया है। ईसाई को यही आश्वासन ईसा का नाम लेने से और मुसलमान को अल्लाह के नाम से मिलता है। इन सब चीजों का अर्थ तो एक ही है और समान परिस्थितियों में इनका एक सा ही परिणाम आता है। मात्र यह नाम-स्मरण तोते को तरह नहीं होना चाहिये किन्तु यह नाम-ध्वनि अन्तस्तल से उठनी चाहिये। धार्मिक वाचन में तो हम भगवद्गीता का नित्यपाठ करते हैं, और अब हम यहीं

तक पहुँच गए हैं कि रोज प्रातःकाल निश्चित किये हुए अमुक अध्यायों का पाठ करके सप्ताह में समस्त गीता पूरी कर देते हैं। तत्पश्चात भारत के अनेक संत-महात्माओं के भजन गाते हैं और उनमें हमने ईसाई भजन भी रक्खा है। आजकल खान साहब यहीं हैं, इसलिए कुरान का भी पाठ होता है। हम यह मानते हैं कि सब धर्म समान हैं। मुझे तुलसीकृत रामायण के पाठ से सबसे अधिक आश्वासन मिलता है। बाईबिल के न्यू टेस्टामेंट से और कुरान से भी आश्वासन मिलता है। मैं इन्हें आलोचक की दृष्टि से नहीं पढ़ता। मेरे मन में इनका महत्व भगवद्‌गीता के जितना ही है यद्यपि न्यू टेस्टामेंट में का सभी उदाहरणार्थ—पाल के पत्रों में का सब-मुझे पसन्द नहीं इसी तरह तुलसीदासजी की रामायण की भी सारी चौपाइयां मेरे मन में नहीं उतरतीं। गीता एक शुद्ध निरलङ्कृत धार्मिक संवाद है। जीवात्मा की परमात्मा के प्रति जो प्रगति है उसका यह वर्णन मात्र है। इसलिए इसमें से चुनाव करने का कोई प्रश्न ही नहीं रहता। (ह से १२-१०-१९३९)

रामनाम का जप कब और कैसे

प्रश्न—दूसरे से बातचीत करते समय मस्तिष्क द्वारा कठिन कार्य करते समय अथवा अचानक घबराहट आदि के समय भी क्या हृदय में रामनाम का जप हो सकता है? अगर ऐसी दशा में भी लोग करते हैं तो कैसे करते हैं?

उत्तर—अनुभव कहता है कि मनुष्य किसी भी हालत में हो सोता भी क्यों न हो अगर आदत हो गई है और नाम हृदयस्थ हो गया है तो जब तक हृदय चलता है तब तक रामनाम हृदय में चलता ही रहना चाहिये। अन्यथा यह कहा जाय कि मनुष्य जो रामनाम लेता है, वह उसके कंठ से निकलता है अथवा कभी-

तक पहुँच गए हैं कि रोज प्रातःकाल निश्चित किये हुए अमुक अध्यायों का पाठ करके सप्ताह में समस्त गीता पूरी कर लेते हैं। तत्पश्चात भारत के अनेक संत-महात्माओं के भजन गाते हैं और उनमें हमने ईसाई भजन भी रक्खे हैं। आजकल खान साहब यहीं हैं इसलिए कुरान का भी पाठ होता है। हम यह मानते हैं कि सब धर्म समान हैं। मुझे तुलसीकृत रामायण के पाठ से सबसे अधिक आश्वासन मिलता है। बाईबिल के न्यू टेस्टामेंट से और कुरान से भी आश्वासन मिलता है। मैं इन्हें आलोचक की दृष्टि से नहीं पढ़ता। मेरे मन में इनका महत्व भगवद्गीता के जितना ही है, यद्यपि न्यू टेस्टामेंट में का सभी उदाहरणार्थ—पाल के पत्रों में का सब-मुझे पसन्द नहीं इसी तरह तुलसीदासजी की रामायण की भी सारी चौपाइयाँ मेरे गले में नहीं उतरतीं। गीता एक शुद्ध निरलंकृत धार्मिक सवाद है। जीवात्मा की परमात्मा के प्रति जो प्रगति है उसका यह वर्णन मात्र है। इसलिए इसमें से चुनाव करने का कोई प्रश्न ही नहीं रहता। (ह० से० १९-१०-११३६)

रामनाम का जप कब और कैसे

प्रश्न—दूसरे से बातचीत करते समय मस्तिष्क द्वारा कठिन कार्य करते समय अथवा अचानक घबराहट आदि के समय भी क्या हृदय में रामनाम का जप हो सकता है? अगर ऐसी दशा में भी जाप करते हैं तो कैसे करते हैं?

उत्तर—अनुभव कहता है कि मनुष्य किसी भी हालत में हो सोता भी क्यों न हो अगर आदत हो गई है, और नाम हृदयस्थ हो गया है तो जब तक हृदय चलता है तब तक रामनाम हृदय में चलता ही रहना चाहिए। अन्यथा यह कहा जाय कि मनुष्य जो रामनाम लेता है वह उसके कंठ से निकलता है अथवा कभी-

जानेवाली रामधुन की ताक़त फ़ौजी ताक़त के दिखावे से बिलकुल अलग और कई गुना बड़ी-चढ़ी होती है। इस से भगवान का नाम लेने से आज की बरबादी की जगह टिकाऊ शान्ति और आनन्द पैदा होगा। (ह० से० ११-८-१९४७)

प्रश्न—क्या दिल में रामनाम रखना काफ़ी नहीं है? उसे ज़बान से बोलने में क्या कुछ विशेषता है?

उत्तर—रामनाम लेने में ख़ूबी है ऐसा मैं मानता हूँ। जो आदमी जानता है कि राम सचमुच उसके दिल में है उसे राम नाम का उच्चारण करने की ज़रूरत नहीं यह मैं क़बूल कर सकता हूँ। लेकिन ऐसे आदमी को मैं नहीं जानता। इससे उलटा मुझे निजी अनुभव यह है कि रामनाम के रटने में कुछ चमत्कार है वह क्या और कैसे यह अनुभव से ही जाना जा सकता है। (ह० से १४४१९४६)

राम नाम कैसे लें?

"मनुष्य का भौतिक शरीर तो आख़िर एक दिन मिटने ही वाला है। उसका स्वभाव ही है कि वह हमेशा के लिए रह ही नहीं सकता। और इस पर भी लोग अपने अन्दर रहने-वाली अमर आत्मा को भुलाकर उसी का ज़्यादा प्यार-दुलार करते हैं। राम नाम में श्रद्धा रखनेवाला आदमी अपने शरीर को एसे झूठे लाड़ नहीं लड़ायेगा बल्कि उसे ईश्वर की सेवा करने का एक ज़रिया-भर समझेगा। उसको इस तरह का माक़ूल ज़रिया बनाने के लिए राम नाम से बढ़कर दूसरी कोई चीज़ नहीं। रामनाम को हृदय में अंकित करने के लिए अनन्त धीरज की ब इन्तिहा सब्र की ज़रूरत है। इसमें युग-के-युग लग सकते हैं लेकिन यह कोशिश करने जैसी है। इसमें कामयाबी भी भगवान् की कृपा से मिल सकती है।

सही-सही पाठ करना कठिन हो सकता है, लेकिन रामनाम या भगवान के नाम को गान में तो हरकोई शामिल हो सकता है। रामनाम जितना कारगर है उतना ही सादा भी। शर्त यह है कि यह दिल से निकलना चाहिये। इस सादगी में ही उसकी महानता और विश्वव्यापकता का रहस्य समाया हुआ है। जिस काम को करोड़ों लोग एक साथ कर सकते हैं, उसमें एक बजोड़ ताक़त पैदा हो जाती है। समूहरूप से रामधुन गाने की कोई तालीम आपको पहले से मिली नहीं थी फिर भी आज आपने जिस कामयाबी के साथ उसे गाकर दिखाया उसके लिए मैं आपको मुबारकबाद देता हूँ। लेकिन उसमें और भी सुधार किये जा सकते हैं। आपको अपने घरों में इसका अभ्यास करना चाहिए। मैं आपसे कहूँगा कि जब रामधुन स्वर और ताल के साथ गाई जाती है तो स्वर ताल और विचार तीनों का मेल मिठास और शक्ति का एक ऐसा अमिट वातावरण पैदा करता है जिसका शब्दों द्वारा बयान नहीं किया जा सकता। (ह से ७-४-४६)

जिन्हें चाहा अनुभव है वे दिल से गाई जानेवाली रामधुन की यानी भगवान का नाम जपने की शक्ति को जानते हैं। मैं लाखों सिपाहियों के अपने बैंड की लय के साथ क़दम उठाकर मार्च करने से पैदा होने वाली ताक़त को जानता हूँ। फ़ौजी ताक़त ने दुनियाँ में जो बरबादी की है उसे रास्ते चलता आदमी भी देख सकता है। हालांकि यह कहा जाता है कि लड़ाई ख़तम होगई फिर भी उसके बाद के नतीजे लड़ाई से भी ज्यादा बुरे साबित हुए हैं। यही फ़ौजी ताक़त के दिवालियापन का सबूत है।

मैं बिना किसी हिचकिचाहट के यह कह सकता हूँ कि लाखों आदमियों द्वारा सच्चे दिल से एक ताल और लय के साथ गाई

वालेवाली रामधुन की ताक़त फ़ौजी ताक़त के दिखावे से बिलकुल अलग और कई गुना बड़ी-चढ़ी होती है। दिल से भगवान का नाम लेने से आज की बरबादी की जगह टिकाऊ शान्ति और आनन्द पैदा होगा। (ह० से० ११-८-१९४७)

प्रश्न—क्या दिल में रामनाम रखना काफ़ी नहीं है? उसे ज़बान से बोलने में क्या कुछ विशेषता है?

उत्तर—रामनाम लेने में खूबी है ऐसा मैं मानता हूँ। जो आदमी जानता है कि राम सचमुच उसके दिल में है उसे राम नाम का उच्चारण करने की ज़रूरत नहीं, यह मैं कबूल कर सकता हूँ। लेकिन ऐसे आदमी को मैं नहीं जानता। इससे उलटा मुझे निजी अनुभव यह है कि रामनाम के रटने में कुछ चमत्कार है वह क्या और कैसे यह अनुभव से हो जाना जा सकता है। (ह० से० १४-४-१९४६)

राम नाम कैसे लें ?

"मनुष्य का भौतिक शरीर तो आखिर एक दिन मिटने ही वाला है। उसका स्वभाव ही है कि वह हमेशा के लिए रह ही नहीं सकता। और फिर भी लोग अपने अन्दर रहने-वाले अमर आत्मा को भुलाकर उसी का ज़्यादा प्यार-दुलार करते हैं। राम नाम में श्रद्धा रखनेवाला आदमी अपने शरीर को ऐसे झूठे लाड़ नहीं लड़ायेगा बल्कि उसे ईश्वर की सेवा करने का एक ज़रिया-भर समझेगा। उसको इस तरह का माक़ूल ज़रिया बनाने के लिए राम नाम से बढ़कर दूसरी कोई चीज़ नहीं। रामनाम को हृदय में अंकित करने के लिए अनन्त धीरज की व इन्तिहा सब्र की ज़रूरत है। इसमें युग-के-युग लग सकते हैं लेकिन यह कोशिश करने जैसी है। इसमें कामयाबी भी भगवान् की कृपा से मिल सकती है।

"जब तक आदमी अपने अन्दर और बाहर सफाई-ईमानदारी और पाकीज़गी या पवित्रता के गुणों को नहीं बढ़ाता उसके दिल से रामनाम नहीं निकल सकता। हम लोग रोज़ शाम की प्रार्थना में स्थितप्रज्ञ का यानी साबित-क़दम इनसान का बयान करने वाले श्लोक पढ़ते हैं। हममें से हर एक आदमी साबित-क़दम या स्थितप्रज्ञ बन सकता है, बशर्ते कि वह अपनी इन्द्रियों को अपने क़ाबू में रक्खे और जीवन को सेवामय बनाने के लिए ही खाये पीये और मौज शौक़ या हँसी विनोद करे। मतलब, अगर अपने विचारों पर आपका कोई क़ाबू नहीं है और अगर आप एक तंग-अंधेरी कोठरी में उसकी तमाम खिड़कियाँ और दरवाज़े बन्द करके सोने में कोई हर्ज नहीं महसूस करते और गन्दी हवा लेते हैं या गन्दा पानी पीते हैं, तो मैं कहूँगा कि आपका रामनाम लेना बेकार है।

"लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि चूँकि आप जितने चाहिये उतने पवित्र नहीं हैं इसलिए आपको रामनाम लेना छोड़ देना चाहिये क्योंकि पवित्रता या पाकीज़गी प्राप्त करने के लिए भी रामनाम लेना लाभप्रद है। जो आदमी दिल से रामनाम लेता है, वह आसानी से अपने आप पर क़ाबू रख सकता है और 'डिसिप्लिन' या अनुशासन में रह सकता है। उसके लिए तन्दुरुस्ती और सफाई के क़ानूनों का पालन करना सहज हो जायगा। उसकी ज़िन्दगी सहज भाव से बीत सकेगी। उसमें कोई विषमता न होगी। वह किसी को सताना या दुःख पहुँचाना पसन्द नहीं करेगा। दूसरों के दुःखों को मिटाने के लिए उन्हें राहत पहुँचाने के लिए खुद तकलीफ़ उठा लेना उसकी आदत में आ जायगा और उसको हमेशा के लिए एक अमिट सुख का लाभ मिलेगा। उसका मन ए

शाश्वत और अमर सुख से भर जायगा। इसलिए मैं कहता हूँ कि आप लगे रहिये और जब तक काम करते हैं, तब तक सारा समय मन ही-मन रामनाम लेते रहिये। इस तरह करने से एक दिन ऐसा भी आयेगा कि जब रामनाम आपका सोते-जागते का साथी बन जायगा और उस हालत में आप ईश्वर की कृपा से तन मन और आत्मा से पूरे-पूरे स्वस्थ और तन्दुरुस्त बन जायेंगे।"

"आप सब मेरे साथ रामनाम लेने या रामनाम लेना सीखने के लिए प्रति दिन इन प्रार्थना-सभाओं में आते रहे हैं। लेकिन रामनाम सिर्फ़ जबान से नहीं सिखाया जा सकता। मुँह से निकले वचन के मुक़ाबले दिल का ख़ामोश ख़याल या मौन-विचार कहीं ज़्यादा ताक़त रखता है। एक सच्चा विचार सारी दुनिया पर छा सकता है उसे प्रभावित कर सकता है। वह कभी बेकार नहीं जाता। विचार या ख़याल को वचन या काम का जामा पहनाने की कोशिश ही उसकी ताक़त को महदूद कर देती है। ऐसा कौन है जो अपने विचार या ख़याल को शब्द या कार्य में पूरी तरह प्रकट करने में कामयाब हुआ हो?"

"आप यह पूछ सकते हैं कि अगर ऐसा है, तो फिर आदमी हमेशा के लिए मौन ही क्यों न ले ले? उसूलन् तो यह मुमकिन है, लेकिन जिन शर्तों के मुताबिक़ मौन-विचार पूरी तरह क्रिया की जगह ले सकते हैं उन शर्तों को पूरा करना बहुत मुश्किल है। मैं खुद अपने विचारों पर इस तरह का पूरा-पूरा काबू पा लेने का कोई दावा अपने लिए नहीं कर सकता। मैं अपने मन से बेमतलब और बेकार के ख़यालों को पूरी-पूरी तरह दूर नहीं रख सकता। इस हालत को पाने या इस तक पहुँचने के लिए तो अनन्त धीरज जागृति और तपश्चर्या की ज़रूरत है।"

"कल जब मैंने आपसे यह कहा था कि रामनाम की शक्ति का कोई पार नहीं है तब मैं किसी अलंकारिक भाषा में नहीं बोल रहा था बल्कि मैं सचमुच यही कहना भी चाहता था। मगर इस चीज को महसूस करने के लिए बिलकुल शुद्ध और पवित्र हृदय से रामनाम का निकलना जरूरी है। मैं खुद इस हालत को पाने की कोशिश में लगा हुआ हूं। मेरे दिल में तो इसकी एक तसवीर खिंच गई है लेकिन मैं इसे पूरी तरह अमल में ला नहीं सका हूं जब वह हालत पैदा हो जायगी तब तो रामनाम रटना भी जरूरी न रह जायगा।

'मुझे उम्मीद है कि मेरी गैरहाजिरी में भी आप अपने घरों में अलग-अलग और एक साथ बैठकर रामनाम लेते रहेंगे। सबके साथ मिलकर, जमात की शकल में प्रार्थना करने का राज या रहस्य यह है कि उसका एक-दूसरे पर जो शान्त प्रभाव पड़ता है वह आध्यात्मिक उन्नति या रूहानी तरक्की की राह में मददगार हो सकता है। (ह० से० २१।१९४६)

रामनाम का मजाक

प्रश्न—आप जानते हैं कि आज हम इतने जाहिल हो गये हैं कि जो चीज हमें अच्छी लगती है या जिस महापुरुष को हम मानते हैं उसकी आत्मा को-उसके सिद्धान्तों को-न लेकर हम उसके भौतिक शरीर की पूजा करने लगते हैं। रामलीला, कृष्णलीला और हाल में ही बना गीता-मन्दिर इसके जिन्दा प्रमाण हैं। बनारस का रामनाम बैंक और रामनाम छपा कपड़ा पहनना या शरीर पर रामनाम लिखकर घूमना 'रामनाम' का मजाक और हमारा पतन नहीं है तो क्या है? ऐसी हालत में 'रामनाम' का प्रचार करके क्या आप इस ढोंगियों के हाथ में पत्थर नहीं दे रहे

है ? अन्तरप्रेरणा से निकला हुआ 'रामनाम' ही रामबाण हो सकता है। और मैं मानता हूँ कि ऐसी अन्तरप्रेरणा सच्ची धार्मिक शिक्षा से ही मिलेगी।

उत्तर—यह ठीक कहा है। आजकल हमारे अन्दर इतना वहम फैला हुआ है और इतना दम्भ चलता है कि सही चीज करने से भी डरना पड़ता है। लेकिन इस तरह डरते रहने से तो सच को भी छिपाना पड़ सकता है। इसलिए सुनहला क़ानून तो यही है कि जिसे हम सही समझें, उसे निडर होकर करें। दम्भ और झूठ तो जगत में चलता ही रहेगा। हमारे सही चीज करने से वह कुछ कम ही होगा बढ़ कभी नहीं सकता। यह ध्यान रहे कि जब चारों ओर झूठ चलता हो तब हम भी उसी में फंस कर अपने को धोखा न दें। अपनी शिथिलता के कारण हम अनजाने में भी ऐसी ग़लती न करें। हर हालत में सावधान रहना तो कर्तव्य ही है। सत्य का पुजारी दूसरा कुछ कर ही नहीं सकता। रामनाम जैसी रामबाण औषधि लेने में सतत जागृत न हो तो रामनाम फोकट जाय और हम बहुत से वहमों में एक वहम बढ़ा दें।

(ह से ९-६ १९४६)

नाम-साधना की निशानियाँ

रामनाम जिसके हृदय से निकलता है उसकी पहिचान क्या ? अगर हम इतना न समझ लें तो रामनाम की फ़ज़ीयत हो सकती है। वैसे भी होती तो है। माला पहनकर और तिलक लगाकर रामनाम बड़बड़ाने वाले तो बहुत मिलते हैं। कहीं मैं उनकी संख्या को बढ़ा तो नहीं रहा हूँ ? यह डर ऐसा वैसा नहीं है। आजकल के मिथ्याचार में क्या करना चाहिये ? क्या चुप रहना ठीक नहीं ? चुप रहना भी ठीक हो सकता है। लेकिन बनावटी चुपसे कोई फ़ायदा नहीं।

जीते जागते मौन के लिये तो बड़ी भारी साधना की जरूरत है। उसकी गैर-हाजिरी में हृदयगत रामनाम की पहिचान क्या ? इस पर हम गौर करें।

एक वाक्य में कहा जाय तो राम के भक्त और गीता के स्थितप्रज्ञ में कोई भेद नहीं। ज्यादा गहरे उतरें तो हम देखेंगे कि रामभक्त पंच महाभूतों का सेवक होगा। वह कुदरत के कानून पर चलेगा। इसलिये उसे किसी तरह की बीमारी होगी ही नहीं। होगी भी तो वह उसे पंच महाभूतों की मदद से अच्छा कर लेगा। किसी उपाय से भौतिक दुःख दूर कर लेना शरीरी का काम नहीं शरीर का भले ही हो। इसलिए जो शरीर को ही आत्मा मानते हैं जिनकी दृष्टि में शरीर से अलग शरीरधारी आत्मा जैसा कोई तत्व नहीं वे तो शरीर को टिकाये रखने के लिए सारी दुनिया में भटकेंगे। लंका जायंगे। इससे उलटे जो यह मानता है कि आत्मा देह में रहते हुए भी देह से अलग है, हमेशा कायम रहनेवाला तत्व है अनित्य शरीर में बसता है, शरीर को संभाल तो रखता है पर शरीर के जाने से घबराता नहीं दुःखी नहीं होता और सहज ही उसे छोड़ देता है, वह देहधारी डाक्टर-वैद्यों के पीछे नहीं भटकता। वह खुद ही अपना डाक्टर बन जाता है। सब काम करते हुए भी वह आत्मा का ही खयाल रखता है। वह मूर्च्छा में से जागे हुए की तरह बरताव करता है।

ऐसा इन्सान हर सांस के साथ रामनाम जपता रहता है। वह सोता है तो भी उसका राम जागता है। खाते-पीते कुछ भी काम करते हुए राम तो उसके साथ ही रहेगा। इस साथी का खो जाना ही इन्सान की सच्ची मृत्यु है।

इस राम को अपने पास रखने के लिए या अपने आप को राम के पास रखने के लिए वह पंच महाभूतों की मदद लेकर संतोष मानेगा।

जानो वह मिटटी हवा पानी सूरज की रोशनी और आकाश का सहज साफ़ और व्यवस्थित तरीक़े से इस्तेमाल करके जो पा सकेगा उसमें संतोष मानेगा। यह उपयोग रामनाम का पूरक नहीं पर रामनाम की साधना की निशानी है। रामनाम को इन मददगारों की जरूरत नहीं। लेकिन इसके बदले जो एक के बाद दूसरे वैद्य हकीमों के पीछे दौड़े और रामनाम का दावा करे उसकी बात कुछ जचती नहीं।

एक ज्ञानी ने तो मेरी बात पढ़कर यह लिखा कि रामनाम ऐसा कीमिया है जो शरीर बदल डालता है। वीर्य को इकट्ठा करना दबाकर रखे हुए धन के समान है। उसमें से अमोघ शक्ति पैदा करने वाला तो रामनाम ही है। खाली संग्रह करने से तो घबराहट होती है। किसी भी समय उसका पतन हो सकता है। लेकिन जब रामनाम के स्पर्श से वह वीर्य गतिमान होता है ऊर्ध्वगामी बनता है तब उसका पतन नामुमकिन हो जाता है।

शरीर के पोषण के लिए शुद्ध खून जरूरी है। आत्मा के पोषण के लिए शुद्ध वीर्यशक्ति की जरूरत है। इसे दिव्य शक्ति कह सकते हैं। यह शक्ति सारी इन्द्रियों की शिथिलता को मिटा सकती है। इसलिए कहा है कि रामनाम हृदय में बैठ जाय तो नई जिन्दगी शुरू होती है। यह क़ानून जवान बूढ़े मर्द औरत सब को लागू होता है।

पश्चिम में भी यह खयाल पाया जाता है। क्रिश्चियन सायन्स नाम का सम्प्रदाय बिलकुल यही नहीं तो क़रीब क़रीब इसी तरह की बात कहता है।

मैं मानता हूँ कि हिन्दुस्तान को एसे सहारे की जरूरत नहीं क्योंकि हिन्दुस्तान में तो यह दिव्य विद्या पुराने जमाने से चली आ रही है। (ह से १६-६-१९४७)

कुदरती इलाज और पश्चिमि देश

हमें अपना यह वहम दूर करना होगा कि जो कुछ करना है उसके लिए पश्चिम की तरफ नजर दौड़ाने पर ही आगे बढ़ा जा सकता है। अगर कुदरती इलाज सीखने के लिए पश्चिम जाना पड़े तो मैं नहीं मानता कि वह इलाज हिन्दुस्तान के काम का होगा। यह इलाज तो सबके घर में मौजूद है। हमेशा कुदरती इलाज की जरूरत भी न रहनी चाहिये। यह इतनी आसान चीज है कि हर एक आदमी को उसे सीख लेना चाहिये। अगर रामनाम लेना सीखने के लिए विलायत जाना जरूरी हो तब तो हम कहीं के भी न रहें। रामनाम को मैं बुनियाद माना है। इस तरह यह सहज ही समझ में आने लायक है कि पृथ्वी पानी आकाश तेज और वायु के लिए समन्दर पार जाने की जरूरत हो ही नहीं सकती। दूसरा जो कुछ सीखने को है वह यहीं है—गांव में मौजूद है। देहाती दवायें जड़ी-बूटियां दूसरे देशों में नहीं मिलेंगी। वे तो आयुर्वेद में ही हैं। अगर आयुर्वेद वाले धूर्त हों तो पश्चिम जाकर आने से वे कुछ भले नहीं बन जायेंगे। शरीर-शास्त्र पश्चिम से आया है। सब कोई कबूल करेंगे कि उसमें से बहुत कुछ चीजें सीखने लायक हैं। लेकिन उसे सीखने के बहुत से जरिये इस मुल्क में मिल सकते हैं मतलब यह है कि पश्चिम में जो कुछ अच्छा है वह ऐसा है और होना चाहिये कि सब जगह मिल सके। साथ ही यहां यह भी कह देना जरूरी है कि कुदरती इलाज सीखने के लिए यह बिलकुल जरूरी नहीं कि शरीर-शास्त्र सीखा ही जाय।

क्यूने जुस्ट, फ्रावर क्नाइप वगैरह लिखने वालों ने जो लिखा है, सो सबके लिये है और सब जगहों के लिए है। वह सीधा है। उसे जानना हमारा धर्म है। कुदरती इलाज जानने वालों के पास

उसकी थोड़ी-बहुत जानकारी होती है और होनी चाहिए। करवरो ...ाव अभी गांव में तो दाखिल हुआ ही नहीं है। उस शास्त्र में ...म गहरे पैठ ही नहीं हैं। करोड़ों को ध्यान में रखकर उस पर ...ोचा ही नहीं गया है। अभी वह शुरू ही हुआ है। आखिर ...ह कहां जाकर रुकेगा सो कोई कह नहीं सकता। सभी शुभ ...ाहसों की तरह उसके पीछे भी तप की ताकत जरूरी है। नजर ...पश्चिम की ओर न जाय बल्कि अपने अन्दर जाय।

(ह से २९-१२४६)

सचमुच मेरा यह विश्वास है कि जो व्यक्ति प्रकृति के आदेश का पूरी तरह अनुसरण करता है उसके मन में बुढ़ापे का भाव कभी आना ही नहीं चाहिये। ऐसा व्यक्ति तो अपने मन में अपने को सदा तरोताजा और नौजवान ही महसूस करेगा और जब उसके मरने का समय आयगा तो उसी तरह मरेगा जैसे किसी मजबूत वृक्ष के पत्ते गिरते हैं। भीष्म पितामह ने मृत्यु-शय्या पर पड़े हुए भी युधिष्ठिर को यही उपदेश दिया मेरी समझ में उसका यही अर्थ है। (ह से २१-२-१९४६)

ईश्वर-भजन

एक पारसी भाई न ईरान से एक पत्र लिखा है और उन्होंने नीचे लिखे हुए प्रश्न पूछे हैं :—

(१) "ईश्वर पर मेरी सम्पूर्ण श्रद्धा है। म मानता हूँ कि ईश्वर ही सारी दुनिया को चलाता है। सभी बुरे या भले काम जैसे कि लड़ाई गरीबी भूकम्प चींटियों का अपने पैरों तले कुचला जाना इत्यादि सभी बातें ईश्वर की ही खुशी से होती हैं और हम लोग न्यून बुद्धि होने के कारण ईश्वर के कामों को समझ नहीं सकते हैं।

(२) "इसमें मैं इस दुविधा में पड़ा रहता हूँ कि जब सब चीजों को ईश्वर ही बनाता है और वही अपनी खुशी से सब कुछ

होना चाहिए। भूखे मनुष्य को भोजन देने से सेवा हो होगी यही मान बैठने का कोई कारण नहीं है। जो मनुष्य आलसी है और दूसरे के भरोसे बैठा रहता है और भोजन की आशा रखता है, उसे भोजन देना पाप है। उसे काम देना पुण्य का काम है और यदि वह काम करने के लिए तैयार नहीं है तो उसे भूखा ही रखने में उसकी सेवा होगी। ईश्वर का नाम जपना पूजापाठ करना आवश्यक है क्योंकि उससे आत्मा की शुद्धि होती है और जो मनुष्य आत्मशुद्ध है वह अपना मार्ग स्पष्ट देख सकता है। लेकिन पूजापाठ ही कुछ ईश्वर की सेवा नहीं है। यह सेवा का साधन है और इसलिए गुजराती कवि नरसिंह ने गाया है:—

ऐं क्यूं स्नान सेवा ने पूजा थकी, शं थयूं धाम रही दान दीधे

इस उत्तर में से तीसरे प्रश्न का भी उत्तर मिल जाता है। तीसरा प्रश्न है जीवन का हेतु। जीवन का हेतु अपने को पहचानना है। नरसिंह की भाषा में कहें तो :—

ज्यां लगी आत्मतत्त्व चीन्यो नहीं त्यां लगी साधना सर्व जूठी

और आत्मतत्त्व आत्मज्ञान जीवमात्र के अर्थात् ईश्वर के साथ ऐक्य तन्मयता सिद्ध करने से ही प्राप्त होता है। जीव मात्र के साथ ऐक्य करने के मानी हैं उनके दुःखों को समझ कर स्वयं दुःखी होना और उनके दुःख का निवारण करना।

(हि न २६ १०-१९२१)

प्रार्थना और कामो

हर एक हिन्दू, मुसलमान ईसाई या और किसी भी धर्म का अनुयायी प्रार्थना में शामिल हो सकता है। गीता के श्लोक बोलने के बाद "रघुपति राघव राजाराम, पतित पावन सीताराम" कहते हैं।

क्या आप जानते हैं पतितपावन सीताराम का अर्थ क्या है ? इन शब्दों में से हम उस परमात्मा को याद करते हैं जो पतित और दलितों का उद्धार करता है । इसीलिए मैं आपसे कहूंगा कि आप खादी पहन कर आवें क्योंकि खादी पहनने से आपका उन पतित और दलित भाइयों से सम्बन्ध अनायास हो जुड़ जायगा ।

रघुपति राघव राजाराम, पतित पावन सीताराम

इस पंक्तियों का उच्चारण करने योग्य अपने आपको बनाने के लिए कम से कम खादी तो जरूर पहन सकते हैं । यह ऐसी प्रार्थना है जिसमें हिन्दू, मुसलमान ईसाई आदि सब शामिल हो सकते हैं क्योंकि यह किसी राजा की नहीं बल्कि राजाधिराज-देवाधिदेव की प्रार्थना है जिसकी हम सब पूजा करते हैं ।

(हि न २९-६-१९२७)

गरीबों के लिए कुदरती इलाज

कुदरती उपचार के गर्भ में यह बात रहा है कि उसमें कम-से कम खर्च और कम से कम व्यवसाय होना चाहिये । कुदरती उपचार का आदर्श हो यह है कि जहाँ तक संभव हो, उसके साधन ऐसे होने चाहिये कि उपचार देहात में ही हो सकें । जो साधन नहीं है, वे पैदा किये जाने चाहिये । कुदरती उपचार में जीवन-परिवर्तन की बात आती है । यह कोई वैद्य की दो हुई पुड़िया की बात नहीं है, और न अस्पताल जाकर मुफ्त दवा लेने या उसमें रहने की ही बात है । जो मुफ्त दवा लेता है वह भिक्षुक बनता है । जो कुदरती उपचार करता है वह कभी भी भिक्षुक नहीं बनता । वह अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाता है और अच्छा बनने का उपाय खुद ही कर लेता है । वह अपने शरीर में से जहर निकालकर, ऐसी कोशिश करता है कि जिससे दुबारा बीमार न पड़ सके ।

और कुदरती इलाज में मध्य-बिन्दु तो रामनाम ही है न ? राम नाम से आदमी सुरक्षित बनता है। शर्त यह है कि नाम भीतर से निकलना चाहिये और रामनाम के भीतर से निकलने के लिए नियम पालन जरूरी हो जाता है। उस हालत में मनुष्य रोग-रहित होता है। इसमें न कष्ट की बात है न खर्च की। मोसम्बी आदि कीमती फल खाना उपचार का अनिवार्य अङ्ग नहीं है। पथ्य खाना—मुक्ताहार—अवश्य अनिवार्य अङ्ग है। हमारे देहात हमारी तरह ही कंगाल हैं। देहात में साग-सब्जी फल दूध वगैरा पैदा करना कुदरती इलाज का खास अङ्ग है। इसमें जो वक्त खर्च होता है वह व्यर्थ तो है ही नहीं बल्कि उससे सभी देहातियों को और आखिर सारे हिन्दुस्तान को लाभ होता है। हर एक व्यक्ति का काम तो यह है कि वह अपना फ़र्ज़ अदा करे और फल ईश्वर पर छोड़ दे। (ह से २-६ १९४६)

हिन्दू धर्म की स्थिति

श्रद्धा और भक्ति के बिना ईश्वर की कृपा प्राप्त नहीं हो सकती है। इसलिए तुलसीदासजी ने रामनाम की महिमा गाई है और भगवत्कार ने द्वादश मंत्र सिखाया है। जो जिस मन्त्र का जाप कर सकता है वही सनातन हिन्दू है बाकी और सब तो श्रद्धा की भाषा में अधूरा हुआ है।

हिन्दू धर्म की और अन्य धर्मों की आज परीक्षा हो रही है सनातन सत्य एक ही है। ईश्वर भी एक ही है। लेखक पाठक और हम सब मतमतान्तरों के मोहजाल में न फसकर सत्य सत्य मार्ग का ही अनुसरण करेंगे तभी हम लोग सनातनी हिन्दू रह सकेंगे। सनातनी माने जाने वाले बहुतेरे भटक रहे हैं। रामनाम लेने वाले बहुत से लोग रह जायंगे और चुपचाप राम का काम करने वाले विरले लोग विजयमाला पहन लेंगे।